ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

चेत-वैशाख, संवत् नानकशाही ५४५
वर्ष ६ अंक ८ अप्रैल **2013**

संपादक : सिमरजीत सिंघ *एम. ए, एम. एम. सी.*
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन: 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**
फैक्स: 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

तपि तपि लुहि लुहि हाथ मरोरउ ॥ बावलि होई सो सहु लोरउ ॥
तै सहि मनि महि कीआ रोसु ॥ मुझु अवगन सह नाही दोसु ॥१॥
तै साहिब की मै सार न जानी ॥ जोबनु खोइ पाछै पछुतानी ॥१॥रहाउ॥
काली कोइल तू कित गुन काली ॥ अपने प्रीतम के हउ बिरहै जाली ॥
पिरहि बिहून कतहि सुखु पाए ॥ जा होइ क्रिपालु ता प्रभू मिलाए ॥२॥
विधण खूही मुंध इकेली ॥ ना को साथी ना को बेली ॥
करि किरपा प्रभि साधसंगि मेली ॥ जा फिरि देखा ता मेरा अलहु बेली ॥३॥
वाट हमारी खरी उडीणी ॥ खंनिअहु तिखी बहुतु पिईणी ॥
उसु ऊपरि है मारगु मेरा ॥ सेख फरीदा पंथु सम्हारि सवेरा ॥४॥ *(पन्ना ७९४)*

सूही राग में उच्चारण किए गए उपरोक्त शबद में शेख़ फरीद जी जीव रूपी स्त्री का बिंब प्रदर्शित कर परमात्मा को उसके पति-रूप में प्रस्तुत करते हुए जीव रूपी स्त्री के माध्यम से फरमान करते हैं कि मैं बहुत दुखी होकर, तड़प-तड़पकर हाथ मल रही हूं, पछता रही हूं अर्थात् मैंने सही वक्त की संभाल नहीं की और गुज़रे वक्त से हुए (प्रभु-मिलन के) घाटे को सोचकर परेशान हो रही हूं। अब मैं बावरि होकर अपने प्रभु-पति को ढूंढती फिरती हूं। हे प्रभु-पति! आपने अपने मन में मेरे प्रति रोष प्रकट किया। इसमें आपका कोई दोष नहीं मेरे ही अवगुण हैं अर्थात् मैं अपनी इस दशा की जिम्मेदार खुद हूं। हे मेरे प्रभु-पति! मैंने आपकी कद्र नहीं जानी। मैंने अपना यौवन-रूपी समय गंवा दिया है और अब पछता रही हूं अर्थात् जब मेरे पास आपको पाने का उचित समय था तब मैं उसका लाभ नहीं उठा सकी।

जीव रूपी स्त्री का कोयल से संवाद रचाते हुए शेख़ फरीद जी फरमान करते हैं कि हे काली कोयल! तू क्यों काली है? कहने से तात्पर्य कि जीव रूपी स्त्री प्रभु-पति की विरह-अग्नि में जलकर खुद को काला हुआ मानती है, इसीलिए वो काली कोयल को देखकर उसकी भी पीड़ा जानना चाहती है। आगे से कोयल का उत्तर है कि मुझे अपने प्रियतम के वियोग ने जला रखा है।

शेख़ फरीद जी आगे फरमान करते हैं कि प्रभु-पति-खसम-मालिक से दूर रहकर सुख नहीं पाया जा सकता। प्रभु कृपा करें तो वे खुद ही जीव-स्त्री को अपने से मिला लेते हैं। खुद इस (संसार-रूपी) भयानक कुएं में जीव-स्त्री गिरी पड़ी थी, न कोई साथी था, न कोई मददगार। प्रभु ने कृपा करके (मुझे) सतसंग (सच्चे लोगों का संग) में मिला लिया है। सतसंग में आकर मैंने देखा कि (मेरा) असल साथी मददगार परमात्मा ही है।

शबद की अंतिम पंक्तियों में शेख़ फरीद जी सब जीवों को संबोधित हो रहे हैं कि हे भाई! हम सबका वास्तविक जीवन-सफ़र (प्रभु-प्राप्ति वाला) अति दुखदायी है, कष्टमयी है। यह खंडे से भी तीखा तथा तेज धार वाला है। इसके ऊपर से अर्थात् खंडे जैसे तेज धार वाले मार्ग से हमने गुज़रना है, इसलिए सब लोग समय रहते सही वक्त की संभालकर इस कठिन राह को आसान बना लें!

वैसाखी की अहमियत

प्राचीन काल से ही भारतवासियों के लिए दीवाली, वैसाखी तथा होली का विशेष महत्त्व रहा है। वैसाखी मौसमी त्यौहार है। यह बिक्रमी संवत् के अनुसार वैसाख की संक्रांति को मनाया जाता है। इस समय सर्दी के बाद मौसम में परिवर्तन आ जाता है तथा ग्रीष्म ऋतु की शुरूआत होती है। खेतों में पकी हुई फसलों को देखकर मानव-मन में नया जोश पैदा हो जाता है। वातावरण में बसंत की आमद से ही वृक्षों के नवीन-ताजा पत्ते प्रकृति में विस्माद उत्पन्न कर देते हैं। नई फसल की आमद प्रत्येक के लिए आर्थिक खुशहाली की उम्मीद लेकर आ रही होती है। इस प्रकार यह दिवस हर पक्ष से खुशहाली का प्रतीक बन जाता है जो जनसाधारण में नया जोश भरकर उसे कुछ नया सृजित करने के लिए प्रेरित करता है। प्राचीन रिवायत है कि वैसाखी वाले दिन ही व्यास ऋषि ने वेदों को सम्पूर्ण करके पहली बार पाठ पूरा किया था। यह भी रिवायत है कि इस दिन राजा जनक ने यज्ञ करके अष्टावक्र से ज्ञान की प्राप्ति की थी।

पंजाब के बहादुर लोगों ने भी अपनी भविष्यमुखी योजनाएं तैयार करने के लिए इसी विशेष दिवस का चुनाव किया। सिक्ख गुरु साहिबान ने थकी-हारी जनता को जब्र-जुल्म का मुकाबला करने की प्रेरणा दी। चतुर लोगों के हाथों भोलेभाले लोगों की हो रही लूट से उन्हें आगाह किया तथा स्त्रियों को उनकी शक्ति का एहसास करवाया। सिक्ख धर्म में सबसे पहले वैसाखी के अवसर पर इकट्ठे होकर नई योजनाओं पर चिंतन करने के लिए तीसरे गुरु श्री गुरु अमरदास जी ने भाई पारो जुलका को संगत को एकत्र करने की प्रेरणा की। इस अवसर पर एकत्र संगत को सारे कर्मकांड छोड़कर अकाल पुरख के साथ जुड़ने की प्रेरणा की गई। नाम-सिमरन व हाथों से काम करने एवं बांटकर छकने की योजनाएं तैयार की गईं। दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने १६९९ ई में वैसाखी वाले दिन सिक्खी को सर्वोच्चता प्रदान की। श्री अनंदपुर साहिब की पावन धरती पर विशाल एकत्र जनसमूह में से गुरु जी ने पांच प्यारों का चयन करके खालसा पंथ की सृजना की। गुरु जी द्वारा सृजित खालसा आने वाले समय में उदाहरणमयी प्राप्तियां करता गया। गुरु जी द्वारा खालसे को प्रदान किया सच्चा-सुच्चा स्वरूप रहती दुनिया तक बरकरार रहेगा। यह जो सभ्याचार खालसे को गुरु जी द्वारा बख़्शिश किया गया वो लगातार पीढ़ी-दर-पीढ़ी सफर तय करता जा रहा है।

सन् १७३३ ई में वैसाखी वाले दिन एकत्र खालसा पंथ की उन्नति को महसूस करते हुए जकरिया ख़ान ने गुरु-पंथ को नवाबी की पेशकश की। १७४७ ई में वैसाखी के ही दिन एकत्र खालसा पंथ द्वारा श्री अमृतसर में रामरौणी का कच्चा किला बनाने का फैसला किया गया। यह किला सिक्खों के लिए भारी संकट के समय पनाह का स्थान सिद्ध हुआ। १७४८ ई में वैसाखी वाले दिन ही पंथ खालसा नाम की जत्थेबंदी तैयार की गई, जो ज़ालिम राज्य को खत्म करके अपनी बहादुरी के झंडे गाड़ती हुई सिक्ख राज्य की स्थापना की बुलंदियों तक पहुंची।

सिक्ख-विरोधियों की साजिशों के कारण पंजाब फिर से अंग्रेजों की गुलामी में चला गया। गुरु साहिबान द्वारा दी नसीहत ने फिर से सिक्खों को आज़ादी के लिए संघर्ष करने के लिए प्रेरित

किया। अंग्रेजों को भारत की धरती से वापिस भेजने की योजना बनाने के लिए १९१९ ई की वैसाखी वाले दिन जलियां वाला बाग में भारी इकट्ठ किया गया। अंग्रेज सरकार को पता चलने पर निहत्थे पंजाबियों पर जबरदस्त फायरिंग की गई। हज़ारों लोग शहादत प्राप्त कर गए। इस घटना के बाद देश के लिए मर मिटने वाले पंजाबियों ने हथियार उठा लिए। अनेक कुर्बानियों के बाद सिक्खों का यह संघर्ष तब तक चलता रहा जब तक अंग्रेज भारत छोड़कर नहीं चले गए।

पंथ-विरोधी ताकतों को सिक्खों की उन्नति कभी भी अच्छी नहीं लगी। पंथ-विरोधियों ने सिक्खों में घुसपैठ करके पंथ को नुकसान पहुंचाने का कोई भी मौका हाथ से नहीं जाने दिया। इसी श्रृंखला के अधीन गुरु-डंम की आड़ में नकली निरंकारियों ने खालसा पंथ को वैसाखी वाले दिन ही श्री अमृतसर आकर नीचा दिखाने की चाल चली। सन् १९७८ में वैसाखी वाले दिन इन नकली निरंकारियों की चुनौती का मुंहतोड़ जवाब देते हुए खालसा पंथ के १३ सिंघों ने शहीदी प्राप्त की। सिक्खों ने बता दिया कि सिक्ख पंथ के प्रति बुरी नज़र रखने वालों के लिए खालसा पंथ कैसे जूझ सकता है। खालसा पंथ की इस बहादुरी से पंथ में फूट डालने वालों की साजिशें धरी-धरायी रह गईं।

सभ्याचार के विकास-विगास की दर साधारणत: बहुत धीमी गति से चलती है। मनुष्य को सभ्याचार की दात स्वाभाविक ही प्राप्त होती रहती है। मनुष्य को पता नहीं चलता कि वो कब और कैसे अपने सभ्याचार को कायम रखने तथा इसके विकास-विगास में हिस्सा डालने के योग्य हो जाता है। किसी सभ्याचार में कभी-कभी बाहरी हस्तक्षेप के कारण दोष उत्पन्न होने शुरू हो जाते हैं, जिनको रोकने के लिए सुचेत वर्गों को हमेशा तत्पर रहना चाहिए। सिक्ख सभ्याचार का विलक्षण स्वरूप शेष संसार से अलग है। सिक्ख जान तो दे सकता है मगर अपने केश कत्ल नहीं करवा सकता। हमें यह बात सोचने के लिए विवश करती है कि आज के सिक्ख बच्चे अपने इस सभ्याचार से दूर क्यों होते जा रहे हैं? कमी है हमारी, क्योंकि शायद हम बदलते समय के अनुसार सिक्ख सभ्याचार के विकास की गति की तरफ ध्यान नहीं दे पा रहे। जहां इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने सारी दुनिया को अपनी मुट्ठी में करके अपना निजी लाभ प्राप्त करने के लिए कार्य किया है वहीं साथ ही सिक्ख सभ्याचार पर भी गहरा विपरीत प्रभाव डाला है। अपने बुजुर्गों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी सभ्याचार प्राप्त करने की जगह हमारे बच्चे इलेक्ट्रॉनिक मीडिया से प्रभावित होकर अपना अलग ही सभ्याचार सृजित किए जा रहे हैं। हमारा पहरावा, खाना-पीना, भाषा, रहन-सहन, रिश्ते-नाते सब इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ही निर्धारित करता जा रहा है। पंजाबियों विशेषत: सिक्खों की अलग पहचान को खत्म करने के लिए मीडिया ने एड़ी-चोटी का ज़ोर लगा रखा है। सिक्खों के इतिहास को समझे बिना ही टिप्पणियां करके हास्यास्पद बातें की जा रही हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पावन बाणी पर सामाजिक नाटकों के नाम रखकर दर्शकों को गुमराह किया जा रहा है। इस समस्या के प्रति सिक्खों का जागृत होने अति आवश्यक है। इसका बदल ढूंढने के लिए सिक्खों को कोशिश करनी चाहिए ताकि दुनिया में सिक्खों द्वारा किए सबसे ज्यादा बहादुरी के कारनामे पूरी दुनिया के सामने आ सकें। दुनिया को पता चल सके कि मीडिया द्वारा जो कहानी रूप में नायक की सृजना करके उनसे कारनामे करवाकर दिखाए जाते हैं वे तो सिक्खों ने यथार्थ रूप में बहुत पहले से ही करके दुनिया के सामने मिसालें पेश कर दी हैं। आवश्यकता है इनको दुनिया में घर-घर तक पहुंचाने के लिए सही तरीका ढूंढने की ताकि हम दुनिया के समान होकर अपना सभ्याचार कायम रखते हुए अपने अस्तित्व एवं बहादुरी का एहसास करवा सकें।

श्री गुरु अंगद देव जी की जीवनोपयोगी शिक्षाएं

*-डॉ. दीपशिखा**

श्री गुरु अंगद देव जी को आदि गुरु श्री गुरु नानक देव जी का प्रतिरूप भी कहा जा सकता है। गुरु-पद पर विराजमान होने से पहले उनका नाम भाई लहिणा जी था। उनमें समाहित सिक्ख मत/धर्म को पूरी तरह से विकसित करने की समस्त विशेषताओं को स्वीकार करने और उनका प्रचार-प्रसार करने के अद्वितीय गुणों का अनुभव करके ही श्री गुरु नानक देव जी ने उन्हें गुरगद्दी सौंपने का निर्णय लिया था। श्री गुरु अंगद देव जी के पिता ज़िला श्री मुकतसर साहिब में स्थित मत्ते दी सरां (आधुनिक सराय नागा) नामक गांव के सुप्रसिद्ध व्यापारी थे। उनके पिता का नाम भाई फेरूमल और माता का नाम दइआ कौर (सभराई) था। राजनीतिक उथल-पुथल के समय उनके पिता मत्ते दी सरां ग्राम को त्यागकर परिवार के साथ तरनतारन के समीपस्थ गांव संघर में आकर अपना व्यापार करने लग गए थे।

एक दिन भाई लहिणा जी देवी के जगराते में भाग लेने के लिए जा रहे थे। रास्ते में एक जगह श्री गुरु नानक देव जी के अनन्य भक्त भाई जोध जी श्री गुरु नानक देव जी की बाणी का पाठ कर रहे थे। उनका सुमधुर स्वर सुनकर भाई लहिणा जी ने उनसे उस महापुरुष का नाम पूछा जिनकी वे बाणी पढ़ रहे थे। तब भाई जोध जी ने बताया कि इस दैवी बाणी के रचनाकार रब्बी-ज्योति श्री गुरु नानक देव जी हैं, जो कि करतारपुर में रह रहे हैं। इसके बाद वे देवी-दर्शन की अभिलाषा छोड़ घोड़े पर सवार होकर करतारपुर की तरफ चल दिए। मार्ग में एक साधारण किसान से जब भाई लहिणा जी ने श्री गुरु नानक देव जी के बारे में पूछताछ की तो वह किसान उनको अपने पीछे-पीछे आने का संकेत करके एक घर के आंगन में ले गया और बोला, "आपका यहां स्वागत है! मुझे ही 'नानक' के नाम से बुलाया जाता है। अब यह बताओ, आपका यहां कैसे आना हुआ है? मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं?" यह सुनकर भाई लहिणा जी हतप्रभ हो गए। उसके बाद उनका नाम जानकर गुरु जी ने मुस्कराकर जो शब्द कहे उनका भाव यह था, "वाह भाई! तू 'लैणा' (लहिणा) है, हमने तेरा 'देणा' है। यह तो कमाल हो गया! अपना 'लैणा' खुद ही लेने के लिए आ गये हो!"

बस, उस एक भेंट के बाद भाई लहिणा जी श्री गुरु नानक देव जी के संग ही रहने लग गए। वे गुरु जी का हुक्म-पालन प्रसन्नचित्त होकर तुरंत किया करते थे। इसी प्रकार एक दिन वे 'लहिणा' से 'अंगद' हो गए और उन्हें नानक निर्मल पंथ का दूसरा पथप्रदर्शक होने का सम्मान प्राप्त हुआ। गुरबाणी में फरमान है :

लहणे धरिओनु छतु सिरि करि सिफती अंम्रितु पीवदै ॥ *(पन्ना ९६६)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु अंगद देव जी के कुल ६३ सलोक दर्ज हैं। इन सलोकों में

**महल्ला बसंतपुरा, नज़दीक गुरुद्वारा बाबा राम सिंघ, नाभा, पटियाला-१४७२०१; मो. ९८५५६-१९०८३*

स्थल-स्थल पर दार्शनिक, धार्मिक, नैतिक और सामाजिक विचारों की अभिव्यक्ति हुई है। इस लेख में उनके विचारों को नैतिक संस्कृति के दृष्टिबिंदु से खोजकर रेखांकित किया जा रहा है, ताकि लोकमंगल के क्षेत्र में श्री गुरु अंगद देव जी की बहुमूल्य देन को उभारकर सामने रखा जा सके। अध्ययन और मूल्यांकन की दृष्टि से गुरु जी की कतिपय प्रमुख शिक्षाओं को आगे कुछ शीर्षकों के अंगभूत सोदाहरण विवेचित करने की यत्किंचित चेष्टा की जा रही है :-

१. कर्म और सामान्य जीवन-यापन पर बल : गुरबाणी में जैसे मानव-मात्र को अपने जीवन में साधारण प्राणियों की भांति नित्यप्रति के कामकाज निपटाते हुए गृहस्थ जीवन जीने और अपने लौकिक कामों को करते रहने की आवश्यकता बताई जाती रही है। ठीक उन्हीं के स्वर में स्वर मिलाते हुए श्री गुरु अंगद देव जी ने भी अपनी बाणी में जीवों को सत्कर्म करने का ही सदैव परामर्श दिया है, क्योंकि प्रभु की भक्ति करने में लौकिक कार्य कभी भी कहीं कोई विघ्न नहीं उपस्थित करते हैं।

श्री गुरु अंगद देव जी के अनुसार जीव अपने सभी बिगड़े हुए कामों को स्वयं संवारकर प्रसन्नता का अनुभव कर सकता है :

बधा चटी जो भरे ना गुणु ना उपकारु ॥
सेती खुसी सवारीऐ नानक कारजु सारु ॥
(पन्ना ७८७)

श्री गुरु नानक देव जी की बाणी से ही सादृश्य रखने वाले श्री गुरु अंगद देव जी का यह सलोक बहुत प्रसिद्ध रहा है, जिसमें मानव-मात्र को अपने शुभ-अशुभ कर्मों से ही प्रभु को प्रभावित करने की ओर संकेत किया गया है :

चंगिआईआ बुरिआईआ वाचे धरमु हदूरि ॥
करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि ॥ (पन्ना १४६)

२. प्रभु द्वारा चिंता-निराकरण और जीविका का प्रबंध : श्री गुरु अंगद देव जी की सच्ची शिक्षाओं पर अमल करते हुए ही जीव निश्चिंत हो सकते हैं। जीव के लिए अपने हाथों से किरत करके जीवन-यापन करना, ईमानदारी से भरपूर जीवन बनाना, नाम जपना तथा वंड छकना ही योग्य है :

नानक चिंता मति करहु चिंता तिस ही हेइ ॥
जल महि जंत उपाइअनु तिना भि रोजी देइ ॥
ओथै हटु न चलई ना को किरस करेइ ॥
सउदा मूलि न होवई ना को लए न देइ ॥
जीआ का आहारु जीअ खाणा एहु करेइ ॥
विचि उपाए साइरा तिना भि सार करेइ ॥
नानक चिंता मत करहु चिंता तिस ही हेइ ॥
(पन्ना ९५५)

३. नारी की स्वातंत्र्य चेतना और गृहस्थ धर्म का स्वीकार : गुरु जी के काल से पहले नारी-पुरुष के हाथों की कठपुतली भर ही हुआ करती थी। वह सामंती संस्कारों से लैस रहने वाले पुरुषों की दासी की ही तरह से सेवा-चाकरी आदि किया करती थी। गुरु जी ने समाज-सेवा करने के लिए 'लंगर' नाम की जो नयी प्रथा चलाई थी, उसे सफल और लोकप्रिय बनाने के लिए श्री गुरु अंगद देव जी की सुपत्नी माता खीवी जी बढ़-चढ़कर भाग लिया करती थीं। उन्हीं के संरक्षण में लंगर का सारा प्रबंध चला करता था। इसी संदर्भ में डॉ. अमृत कौर (रैणा) ये विचार व्यक्त करती हैं, "जैसे श्री गुरु अंगद देव जी नाम-रस बांट रहे थे, वैसे ही माता खीवी जी खुले हाथों प्रसाद बांट रही थीं।"

बलवंड खीवी नेक जन जिसु बहुती छाउ पत्राली ॥
लंगरि दउलति वंडीऐ रसु अंम्रित खीरि घिआली ॥ . . .

पए कबूलु खसंम नालि जां घाल मरदी घाली ॥
(पन्ना ९६७)

यही विदुषी समीक्षिका नारी में स्वतंत्रता की भावना उत्पन्न होने के प्रसंग में आगे कहती हैं, "लंगर की सेवा ने औरत को घर की चारदीवारी से बाहर निकाला। इससे पर्दा-प्रथा का अंत हो रहा था। महिलाएं पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लंगर की सेवा किया करती थीं। उन्हें संगत में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता। बाणी का कीर्तन करना, कथा सुनना, सेवा की भावना के साथ-साथ बाणी का पढ़ना सीखना, इन सबसे उनमें आत्मविश्वास उत्पन्न हो गया। लंगर की प्रथा सिक्ख परंपरा का एक अभिन्न भाग बन चुकी है। श्री गुरु अंगद देव जी की सुपुत्री बीबी अमरो जी के उदाहरण से स्पष्ट है कि कन्याओं की शिक्षा का उचित प्रबंध था, तभी तो उनके मुख से बाणी का पाठ सुनकर श्री गुरु अमरदास जी का भी काया-कल्प हो गया था। इस प्रकार गुरु जी ने नारी को अपने कार्य में भागीदार बनाकर गृहस्थ आश्रम की महत्ता को लोगों तक पहुंचाने के प्रयास किए। लोगों को वैरागी-त्यागी होने से वर्जित किया। सामाजिक कामों में नारी को समानता की भागीदार समझा जाने लग गया। नारी-मात्र के सम्मान की इसी भावना ने सिक्ख धर्म में नारी के आत्मविश्वास, परिश्रम और स्वाभिमान या गौरव को विकसित करने में विशेष योगदान किया है।" *(डॉ. अमृत कौर, लेख 'गुरु अंगद देव जी दी विदिअक देन', कथन का भावानुवाद)*

४. बच्चों को प्रोत्साहन : श्री गुरु अंगद देव जी ने बड़ी उम्र के नर-नारियों को तो गुरु-घर के साथ जोड़ने में एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाया ही था, बालकों को भी गुरु-घर के साथ सम्बद्ध करने-कराने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी थी। वे अपने व्यस्त समय में से कुछ अवकाश निकालकर स्वयं बालकों के संग खेलें खेला करते थे, उनके साथ खुलकर बातें भी करते थे और उन्हें अपने मंडल का एक भाग भी बनाया करते थे। बच्चों के साथ क्रीड़ा करते समय वे प्राय: इतने निमग्न हो जाया करते थे कि एक बार तो बादशाह हुमायूं आपके सिरहाने आकर खड़ा रहा, परंतु आपने उसकी ओर कोई ध्यान तक न दिया और बालकों में ही पूर्ववत् व्यस्त रहे। कहते हैं कि अपनी ऐसी उपेक्षा देखकर बादशाह हुमायूं ने म्यान से अपनी तलवार तक निकाल ली थी। यह देखकर श्री गुरु अंगद देव जी निर्भयतापूर्वक मुस्कराए और उन्होंने व्यंग्यपूर्वक बादशाह से कहा था, "तूने जिसके ऊपर तलवार चलानी थी, उससे तो अपनी जान बचाकर यहां भाग आया है। अब हम निहत्थे फकीरों पर तलवार उठा रहा है!" यह सुनकर बादशाह हुमायूं अत्यंत लज्जित हुआ था।

इस छोटी-सी घटना से गुरु जी के बाल-प्रेम, निर्भीकता और समदर्शिता के नैतिक मूल्यों का ही प्रमाण मिलता है, जो गुण साधारण जनों में प्राय: विरल ही रहे हैं।

५. गुरु-शिष्य-सम्बंध के लाभ : गुरु जी ने मनुष्यों को अपने जीवन में एक सच्चे गुरु को विशेष महत्त्व और स्थान देने के लिए बहुत अधिक बल दिया है। जब एक शिष्य अकथ सेवा-भाव और समर्पणशीलता के गुणों के कारण अपने गुरु के बहुत समीप हो जाता है, तब उसका व्यक्तित्व, गुण, स्वभाव आदि सभी उसी के अनुरूप हो जाया करते हैं। अंग्रेजी समीक्षक मैकालिफ़ ने कहीं यह टिप्पणी की है कि जिस प्रकार सोना आग में तप-गलकर कुंदन बन जाया करता है, ठीक उसी प्रकार श्री गुरु

नानक देव जी के भाई लहिणा जी नामक परम शिष्य भी अपनी निष्काम सेवा-भावना और समर्पण के साथ कठोर परिश्रम और गुरु के प्रति आज्ञा-पालन के प्रतिफलस्वरूप गुरगद्दी प्राप्त करने के पूर्ण अधिकारी बने थे।" श्री गुरु अंगद देव जी की नि:स्वार्थ प्रेमा-भक्ति ही इस कथन को चरितार्थ करने वाली बनी थी-- *"बाबाणै घरि चानणु लहणा ॥"* भाई गुरदास जी जैसे प्रकांड विद्वान ने *"पुत सपुत बबाणे लहणा"* कहकर उनको गौरवान्वित किया है। भाई सत्ते-भाई बलवंड ने भी उनके द्वारा गुरगद्दी पर समासीन होने को उनका कायाकल्प ही घोषित किया है :

नानकु काइआ पलटु करि मलि तखतु बैठा सै डाली ॥ *(पन्ना ९६७)*

वे आधी रात होने पर भी श्री गुरु नानक देव जी के वस्त्र धोकर लाया करते थे। एक गिरी हुई दीवार को अनेक बार गिराने के बाद पुन: बना देने की कठोर परीक्षा में भी वे खरे उतरे थे। जब एक बार श्री गुरु नानक देव जी ने पीतल के लोटे को एक गंदे गड्ढे में फेंककर उसे वहां से निकाल लाने का आदेश दिया, तब भी वे बिना किसी संकोच के वैसा कर गुज़रे थे। एक बार उन्होंने अपने नए वस्त्रों के ख़राब हो जाने की चिंता किए बिना घास के गट्ठर तक उठाए थे। उस समय कीचड़ के छींटों को उन्होंने केसर के छींटे ही समझा था। श्री गुरु अंगद देव जी के शब्द हैं :

गुर सेवा ते जाणिआ सचु परगटीएसा ॥
(पन्ना ९५५)

६. गुरु द्वारा मनोविकार-निवारण और साधसंगत : श्री गुरु अंगद देव जी यह मानते थे कि प्रभु प्रत्येक जीव के भीतर ही बसा करता है और यह गुरु ही है जोकि अंतर में गुप्त रहने वाले उस परम तत्त्व को प्रकट कर दिया करता है : *"सभ महि गुपतु वरतदा गुरमुखि प्रगटाइआ ॥"* उसके दर्शन करके मानो जीव के मन की जन्मों की मैल दूर हो जाया करती है : *"तुधु डिठे सचे पातिसाह मलु जनम जनम दी कटीऐ ॥"* इस जीवन में ज्ञान, ध्यान और चंचल मन पर पूर्ण संयम जैसे गुण भी जीव-मात्र को केवल सच्चे गुरु के दर्शन करने के बाद उसी की कृपा से मिला करते हैं। गुरु की कृपा से समस्त तम रूपी अज्ञान का नाश हो जाया करता है :

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार ॥
एते चानण होदिआं गुर बिनु घोर अंधार ॥
(पन्ना ४६३)

७. जात-पात का विरोध : श्री गुरु अंगद देव जी मानव-मात्र को बिना किसी भेदभाव के एक समान होने और समझने-समझाने पर विशेष बल देते हैं। जहां विश्व में प्रचलित कुछ धर्म और मत मनुष्यों को परस्पर असमान समझने और अपने ही विचारों को बलात् ग्रहण करने-कराने के पूर्वाग्रहों से ग्रस्त मिल जाते हैं, वहां सिक्ख मत के अनुसार पूरी गुरबाणी जीव-मात्र को बिना कोई परस्पर अंतर किए एक समान होने का ही महत्त्व समझाती है। श्री गुरु अंगद देव जी का यह फरमान उल्लेखनीय है :

कथा कहाणी बेदी आणी पापु पुंनु बीचारु ॥
दे दे लैणा लै लै देणा नरकि सुरगि अवतार ॥ . . .
अंम्रित बाणी ततु वखाणी गिआन धिआन विचि आई ॥
गुरमुखि आखी गुरमुखि जाती सुरती करमि धिआई ॥
(पन्ना १२४३)

८. नाम-सिमरन, परस्पर-प्रेम और विनम्रता की महत्ता : श्री गुरु अंगद देव जी ने जीव-मात्र को अपने जीवन में प्रभु की एकता स्वीकार

(शेष पृष्ठ १३ पर)

श्री गुरु अंगद देव जी की विचारधारा की देन

*-डॉ. शब्द कुमार**

श्री गुरु अंगद देव जी का काल विशेष उथल-पुथल का काल रहा है। तब देश में चारों ओर श्रमणों, ब्राह्मणों, सन्यासियों और योगियों-जतियों के विभिन्न मतवादों का जाल फैला हुआ था, जिसमें फंसकर जनसाधारण दिग्भ्रमित होते रहते थे। देश के भीतर सदियों से चली आ रही आश्रमों और वर्णों की व्यवस्था ने तो अपना भयावना रूप धारण किया ही हुआ था, इसके साथ ही जीवन और जगत के प्रति हद दर्जे का वैराग्य-भाव भी लोगों को समय-समय पर ग्रस्त करता रहता था। लोगों के मन में यज्ञ, बलि आदि ने अपना स्थायी घर जमाया हुआ था। दूसरी ओर लोगों में इसलामी धर्म की अनेक मिथ्या क्रियाओं ने भी डेरा जमा रखा था। इसी तरह सूफ़ी धर्म के मानने वाले लोगों में उनके अपने विशिष्ट संगीत और क़ब्र तक की पूजा करने की विशेष पद्धति, तकियों आदि पर जाकर भक्ति करने-कराने की प्रथा प्रचलित थी।

१. मानव-धर्म की सर्वोच्चता : गुरु जी के काल में सिक्ख धर्म की लोकप्रिय बातों और सिद्धांतों के कारण लोग तेज़ी से इस मत की ओर आकर्षित होते चले जा रहे थे। कुछ लोग इस नये मत को प्रभावशाली बनाने के लिए परंपरागत मिथ्या रीति-रिवाज़ों से इसको अलग रख कर विकसित करने की आवश्यकता पर बल देने लगे थे। इसके लिए सबसे पहले प्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी ने सार्थक प्रयास किए थे। उन्होंने बाहरी कर्मकांडों, यथा पितरों की पूजा, यज्ञ, व्रतोपवास आदि का डटकर विरोध किया और मूर्ति-पूजा आदि उपासना-पद्धतियों का यथासंभव विरोध करके वाहिगुरु के नाम-सिमरन तथा भजन-कीर्तन की विधियों को लोकप्रिय बनाने का ऐतिहासिक महत्त्व का कार्य सम्पन्न किया था। उसके बाद उन्हीं के योग्यतम शिष्य (भाई लहिणा जी/श्री गुरु अंगद देव जी) को उनकी कृपा और अपनी योग्यता व परिश्रम के पुरस्कारस्वरूप उनकी गद्दी पर शोभायमान होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उन्होंने भी अपने गुरु श्री गुरु नानक देव जी के पद-चिन्हों पर चलते हुए भारतीय जनता का अध्यात्म और धर्म के क्षेत्र में मार्गदर्शन किया। उनके मतानुसार इस संसार में सबसे बड़ा धर्म मानव धर्म ही है और प्रत्येक जीव को उसे ही अपनाते हुए दुखी और पीड़ित लोगों की सदैव सच्चे मन से सेवा-शुश्रूषा करते रहना चाहिए। उस समय श्री गुरु अंगद देव जी द्वारा सुझाए हुए इस मार्ग की आज के वैश्विक चिंतन वाले जीवन में प्रासंगिकता समयसंगत ही कही जाएगी। गुरु जी का स्पष्ट रूप से यह कथन है:

जोग सबदं गिआन सबदं बेद सबदं ब्राहमणह ॥
खत्री सबदं सूर सबदं सूद्र सबदं परा क्रितह ॥
सरब सबदं एक सबदं जे को जाणै भेउ ॥
नानकु ता का दासु है सोई निरंजन देउ ॥
(पन्ना ४६९)

२. एक ही प्रभु : गुरु साहिब के काल में परंपरागत मान्यता सैकड़ों नामों और प्रकारों वाले देवताओं को लेकर चल रही थी और उस बहुदेववादी धारणा से सिक्ख मत के अनुयायियों

**कोठी नं. १५४ गली नं. १, जुझार नगर, पटियाला-१४७००३(पंजाब)-मो : ०९०४१५-९१३६*

में पर्याप्त मतभेद था, जो कि आज तक यथावत चला आ रहा है। यहां तक कि एक ही जाति या वर्ण के लोगों में भी अपने उपास्य को लेकर पर्याप्त मतभेद मिलते थे और यह प्रक्रिया आज तक बदस्तूर चली आ रही है। अपने श्रद्धेय गुरु श्री गुरु नानक देव जी के सिद्धांतों का अनुगमन करते हुए श्री गुरु अंगद देव जी ने भी लोगों को समझाते हुए कहा कि सभी लोगों का प्रभु या स्वामी केवल एक ही है और सभी प्राणियों में उसी एक प्रभु की आत्मा निवास किया करती है। जो जीव यह बात अपने मन में समझ लेता है, उसका जीवन सार्थक हो जाता है। अध्यात्म और धर्म के संसार में यह विचार सर्वथा विलक्षण ही माना गया था। उन्होंने दो टूक शब्दों में यह घोषणा की:

एक क्रिसनं सरब देवा देव देवा त आतमा ॥
आतमा बासुदेवस्यि जे को जाणै भेउ ॥
नानकु ता का दासु है सोई निरंजन देउ ॥
(पन्ना ४६९)

सभी जीवों को केवल उसी एक परमात्मा को पाने या ध्याने का हर घड़ी प्रयास करना चाहिए। ऐसा करने से पहले सभी मनोविकारों, यथा काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार का निवारण करना आवश्यक हुआ करता है।

कुछ आलोचक यह समस्या भी सामने रखते हैं कि वह पारब्रह्म तो निर्गुण और निराकार ही है, तब भला एक साधारण जीव उस तक अपनी रसाई कैसे कर सकता है? दूसरी समस्या यह है कि संसार में उस तक ले जाने वाले इतने अधिक साधना-पथों या धार्मिक-मार्गों के होते हुए भला इस बात का निर्णय कोई जीव कैसे कर सकता है कि इन सभी धार्मिक और सांप्रदायिक पथों में उसके द्वारा ग्रहण करने या अपनाने के लिए कौन-सा पथ या मत सर्वोत्तम हो सकता है? इस समस्या के समाधानस्वरूप श्री गुरु अंगद देव जी ने अपने ही श्रद्धेय श्री गुरु नानक देव जी द्वारा उपदिष्ट मार्ग अपनाने का ही सभी जनों को निर्देश किया है। उनका कथन है कि इस संसार में सच्चा गुरु ही है, जो तम रूपी अज्ञान से निकालकर भ्रमित और दुविधाग्रस्त भक्त या जीव को ज्ञान का आलोक प्रदान करने में सर्वसमर्थ हुआ करता है :

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार ॥
एते चानण होदिआं गुर बिनु घोर अंधार ॥
(पन्ना ४६३)

३. शबद को ही गुरु मानने का विचार: चूंकि सर्वप्रथम श्री गुरु नानक देव जी ने शबद को ही गुरु घोषित किया था, इसलिए उन्हीं के पदबंधों पर अनुधावन करते हुए उनके परम योग्य शिष्य और गुरु-पद पर सुशोभित होने वाले श्री गुरु अंगद देव जी ने पूर्व-गुरु सहित अन्य सारी बाणी को एकत्र कर भविष्य के लिए सुरक्षित किया।

४. माया और हउमै (अहंकार) के निराकरण की आवश्यकता : जिस प्रकार सभी मध्ययुगीन संतों-साधुओं और पीरों-फ़कीरों ने मानव मात्र को आपने मनोविकारों-- काम, क्रोध, लोभ, मोह, और अंहकार से दूर रहकर शुद्ध सात्विक जीवन जीने के सदुपदेश दिए हैं, ठीक उसी प्रकार श्री गुरु अंगद देव जी ने भी हउमै से दूर रहने का फ़रमान जारी किया है। हउमै की निवृत्ति मनुष्य की सम्पूर्णता के लिए आवश्यक है। गुरु जी ने इसके बारे में अत्यंत विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। गुरु जी ने यह माना है कि :

हउमै दीरघ रोगु है दारू भी इसु माहि ॥

श्री गुरु अंगद देव जी ने अपनी बाणी में हउमै की छः प्रमुख बुराइयों या कमियों की ओर इस प्रकार संकेत कर दिए हैं:

- एह किनेही आसकी दूजै लगै जाइ ॥

– चंगै चंगा करि मंने मंदै मंदा होइ ॥
– आसकु एहु न आखीऐ जि लेखै वरतै सोइ ॥
– सलामु जबाबु दोवै करे मुंढहु घुथा जाइ ॥
– चाकरु लगै चाकरी नाले गारबु वादु ॥
गला करे घणेरीआ खसम न पाए सादु ॥
– एहु किनेही चाकरी जितु भउ खसम न जाइ ॥
(पन्ना ४७४-७५)

ये व्यक्तित्व-सम्बंधी त्रुटियां या कमियां ही इस संसार के जीवों को सच्चे जीवन-पथ से दूर ले जाया करती हैं। ये हर समय जीव और प्रभु के बीच बाधा के रूप में एक पर्दा-सा उसारे रखती हैं। हम जीव इतना भी नहीं जान पाते हैं की इस पर्दे के दूसरी ओर क्या कुछ उपस्थित है या हो सकता है। एक जीव के रूप में हमारी यही सीमा हुआ करती है। एक सच्चा गुरु ही माया के बंधन को तोड़ने में समर्थ होता है। इस कार्य में वह अपने प्रत्येक भक्त या जीव की अधिकतम सहायता करने में पूर्ण रूप से समर्थ होता है। एक गुरु ही है जो इस जगत के घने तम में जीव को ज्योति-पथ का पथिक बना सकता है। अन्य कोई भी ऐसा करने के योग्य या सक्षम कभी नहीं हुआ करता है।

५. गुरमुखी लिपि की रचना और लोकप्रियता : भाषा और साहित्य के क्षेत्र में श्री गुरु अंगद देव जी की विशेष देन पंजाबी भाषा की गुरमुखी नामक लिपि की रचना करके उसे विश्व भर में प्रचलित कर देना भी है, जिसके कारण उसका नाम पंजाबी भाषा और गुरमुखी लिपि के इतिहास में सदैव स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य ठहरता है। चूंकि इस लिपि के अक्षर स्वयंमेव श्री गुरु अंगद देव जी के श्रीमुख से ही निकले थे, इसी लिए इस लिपि का नाम गुरमुखी पूरी तरह से सार्थक कहा जा सकता है।

इसे कहते हैं 'यथा नाम तथा गुण' की कहावत का चरितार्थ होना। उनके बाद आगे चलकर श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब का संपादन गुरमुखी लिपि में सम्पन्न करके इस लिपि की प्रमाणिकता पर सदा के लिए अपनी मुहर लगा दी थी। तब से लेकर आज तक पंजाबी जैसी सुमधुर और सहज-सरल भाषा लिखने-पढ़ने के लिए गुरमुखी लिपि सब लोगों का मानो कंठहार बनकर रह गई है। सिक्ख धर्म के अधिकतम प्रचार और प्रसार के लक्ष्य की पूर्ति करने के लिए यह अत्यंत आवश्यक समझा गया कि इसका अपना एक अलग-से विशिष्ट धर्म-ग्रंथ होने के साथ-साथ पृथक से जीवन-यापन सम्बंधी शैली भी हो, एक अलग भाषा और दूसरी लिपियों से अलग लिपि भी होनी चाहिए। उस काल में पंजाबी भाषा बड़ी तीव्रता से जनसाधारण के मध्य प्रिय होती चली जा रही थी और आम बोलचाल के साथ दैनिक कामकाज की भाषा के स्पृहणीय सिंहासन पर भी शोभायमान हो रही थी।

६. कलयुग की पतनोन्मुख दशा का आख्यान : यह एक परिवर्तनशील या संक्रातिकालीन युग कहा जा सकता है। इसे कलयुग की संज्ञा दी जाती है। भारतीय संस्कृति के अनुसार ये कुल युग रहे हैं : (क) सतयुग (ख) त्रेता (ग) द्वापर (घ) कलयुग। इनमें प्रथम तीनों युग तो व्यतीत हो चुके हैं। यह अंतिम कलयुग चल रहा है और श्री गुरु अंगद देव के काल में भी यही युग था। कलयुग में मानवीय मूल्यों का पतन देखने को मिलता है। चोर, लुटेरे, डाकू तथा उचक्कों आदि का ही चारों ओर बोलबाला देखा जाता है। हरेक व्यक्ति कम से कम समय और परिश्रम से वैध-अवैध साधनों से अपने पास अधिकतम धन का स्वामी हो जाने की इच्छा अपने मन में सदैव पाले रखता है। वह समाज में किसी न किसी प्रकार की चोरी या लूटपाट का काम करने-कराने में व्यस्त है। यह बात

कटु होने पर भी वर्तमान काल का भौतिकतावादी सत्य माना जाता है। श्री गुरु अंगद देव जी ने वार मलार में समाज की दुर्दशा के सम्बंध में ये शबद कहे हैं :

नाउ फकीरै पातिसाहु मूरख पंडितु नाउ ॥
अंधे का नाउ पारखू एवै करे गुआउ ॥
इलति का नाउ चउधरी कूड़ी पूरे थाउ ॥
नानक गुरमुखि जाणीऐ कलि का एहु निआउ ॥
(पन्ना १२८८)

श्री गुरु अंगद देव जी का यह दृढ़ विचार है कि कलयुग एक ऐसी अवस्था है, जिससे मनुष्य तथा समाज का पतन होना आरंभ हो जाता है। इस युग में समाज में नैतिक पतन की पराकाष्ठा के निरदर्शन मिलने लग जाया करते हैं। इस काल में लोगों की मानसिक अधोगति एक आम-सी बात होकर रह गई है। यही कहा जा सकता है कि आज लोगों के विकृत होते जा रहे मन बुरे विचारों को सुनने, देखने तथा प्रकट करने में ही रुचि लेने लग गए हैं। देश क्या, पूरे विश्व भर में चारित्रक पतन का साम्राज्य छाया हुआ देखा जा सकता है। राजकीय पतन होना आरम्भ हो गया है। इसी प्रकार आर्थिक, दार्शनिक, धार्मिक, नैतिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृकि क्षेत्र में किसी न किसी रूप में पतन के पापी पैर पसरते चले जा रहे हैं। लोग अपने पैतृक संस्कारों को छोड़-छाड़कर जीवन-मूल्यों का बलिदान किए चले जा रहे हैं। सभ्यता और संस्कृति तो मानो गहरे गर्त में धंसती चली जा रही है। लोग शिष्टाचार और संस्कारों के निर्वाह से कोसों दूर होते चले जा रहे हैं। श्री गुरु नानक देव जी ने कुछ ऐसा ही विवरण प्रस्तुत किया है :

कलि कलवाली सरा निबेड़ी काजी क्रिसना होआ ॥
बाणी ब्रहमा बेदु अथरबणु करणी कीरति लहिआ ॥
कलि परवाणु कतेब कुराणु ॥
पोथी पंडित रहे पुराण ॥
नानक नाउ भइआ रहमाणु ॥ (पन्ना ९०३)

इसी स्वर का अनुकरण करते हुए श्री गुरु अंगद देव जी ने भी राजकीय कार्यों तथा सामाजिक जीवन के मूल्यों में आ रहे घोर पतन पर कुठाराघात करते हुए व्यंग्यपूर्वक कहा है :

कलि महि बेदु अथरबणु हूआ नाउ खुदाई अलहु भइआ ॥
नील बसत्र ले कपड़े पहिरे तुरक पठाणी अमलु कीआ ॥ (पन्ना ४७०)

७. लौकिक जीवन की उपादेयता पर बल :

गुरबाणी जीव-मात्र को गृहस्थ जीवन का अच्छी प्रकार से निर्वाह करते और संतान आदि का सुख भोगते हुए इसके साथ ही प्रभु का चिंतन-मनन, नाम-जाप, भजन-कीर्तन आदि करने की शिक्षा देती है। श्री गुरु अंगद देव जी ने एक सलोक में ऐसी लाभकारिणी जीवनोन्मुखी शिक्षा प्रदान करते हुए जीव-मात्र को संबोधित करते हुए ये शब्द कहे हैं :

उदमु करेदिआ जीउ तूं कमावदिआ सुख भुंचु ॥
धिआइदिआ तूं प्रभू मिलु नानक उतरी चिंत ॥
(पन्ना ५२२)

श्री गुरु अंगद देव जी ने अपनी शाश्वत महत्ता वाली सार्वकालिक और सार्वदेशिक बाणी में भौतिक और लौकिक जीवन की उपयोगिता को तर्क सहित प्रतिपादित किया है। उन्होंने भी सांसारिक जीवन की सार्थकता के प्रति अपनी सम्पूर्ण आस्था व्यक्त की है। उन्होंने वर्तमान काल को एक संघर्ष का काल ठहराया है। जीवन में संघर्ष करने के लिए श्री गुरु अंगद देव जी ने लोगों को सदैव स्वयं को सामाजिक महत्त्व और हितों के कार्य करने के लिए कटिबद्ध एवं तत्पर रहने का आदर्श पाठ पढ़ाया है। गुरु जी ने इस मानवीय जीवन को सच की कोठरी कहना अधिक उपयुक्त समझा है

और इसी आशय से वे फ़रमाते हैं :
इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वासु ॥
इकन्हा हुकमि समाइ लए इकन्हा करे विणासु ॥
(पन्ना ४६३)

अर्थात् यह संसार सच की कोठरी के समान है। इस कोठरी के बीच केवल सच्चा परम तत्व ही बसा करता है। इसी बात या तथ्य की स्वीकृति इस नश्वर या मरणधर्मा जीव का शुभ-अशुभ, मंगल-अमंगल या तो किया करती है या फिर उसका एक मात्र कारण बना करती है। सच तो यह है कि यह मायावी संसार एक खेल के समान है। संसार रूपी खेल का वास्तविक एवं मार्मिक वर्णन जपु जी साहिब में भी हुआ है। श्री गुरु अंगद देव जी ने भी वार माझ में श्री गुरु नानक देव जी की मूल विचारधारा को व्यक्त करते हुए प्रकारान्तर से स्वयं भी यह विचार प्रतिपादित किया है :
पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ॥
दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु ॥
(पन्ना ८)

समग्रत : कहा जा सकता है कि श्री गुरु अंगद देव जी की बाणी में जीवनोपयोगी अनेक शिक्षाओं के भंडार भरे पड़े मिलते हैं। आवश्यकता केवल उनको सही आशयों के साथ समझकर अपने व्यवहारिक जीवन में उन पर आचरण करने की हुआ करती है। ❂

श्री गुरु अंगद देव जी की जीवनोपयोगी शिक्षाएं

(पृष्ठ ८ का शेष)

करते हुए, उसके नाम का सदैव सिमरन, ध्यान और जाप आदि करते हुए सर्वदा निर्मल आचरण करने पर ही विशेष बल दिया है। वे कहते हैं :
जोग सबदं गिआन सबदं बेद सबदं ब्राहमणह ॥
खत्री सबदं सूर सबदं सूद्र सबदं परा क्रितह ॥
सरब सबदं एक सबदं जे को जाणै भेउ ॥
नानकु ता का दासु है सोई निरंजन देउ ॥
(पन्ना ४६९)

उनके मतानुसार एक जीव या सच्चा भक्त प्रभु प्यारे की 'रज़ा' (भाणे) में बिना किसी शर्त के सेवक-सेव्य-भाव से उसका भजन, कीर्तन, सिमरन करके ही अपना जीवन जीता रहता है। सबसे बड़ी बात यह है कि ऐसे करते-कराते हुए वह हर घड़ी पूर्ण आज्ञाकारी, विनम्र और प्रभु के प्रति श्रद्धालु 'हुकमी बंदा' ही बना रहता है। वे इस 'माया' रूपी भौतिक संसार में जीने की अपेक्षा अपने श्रद्धेय के लिए मर-मिटने का महान आदर्श भी जीवों के आगे रखते हुए यह सदुपयोगी शिक्षा फरमाते हैं :
जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ ॥
ध्रिगु जीवणु संसारि ता कै पाछै जीवणा ॥
(पन्ना ८३)

इस प्रकार श्री गुरु अंगद देव जी के जीवन और व्यक्तित्व के साथ-साथ उनकी बाणी से हमें आज के कष्टों से पूर्ण वातावरण में सुखद जीवन जीने की मार्गदर्शिनी सच्ची शिक्षाएं प्राप्त होती हैं। ❂

श्री गुरु अंगद देव जी : एक परिचय

*-श्री विवेक दीप पुरी**

श्री गुरु अंगद देव जी का पहला नाम भाई लहिणा जी था। श्री गुरु अंगद देव जी का जन्म सराय नागा नामक गांव, जो ज़िला श्री मुक्तसर साहिब (पंजाब) में है, में पिता श्री फेरू मल्ल जी तथा माता दइआ कौर जी के घर ५ वैसाख, सं. १५६१ तदनुसार ३१ मार्च, सन् १५०४ को हुआ। भाई लहिणा जी शक्ति (देवी) के उपासक थे, परंतु जब आपका संपर्क श्री गुरु नानक देव जी एक सिक्ख के साथ हुआ तो आप गुरु जी की तरफ आकृष्ट हुए तथा करतारपुर पहुंचकर श्री गुरु नानक देव जी के सिक्ख बने। १५२० ई. में आपका विवाह माता खीवी जी से हुआ और उनसे आपको दो पुत्र-- श्री दासू जी एवं श्री दातू जी तथा दो पुत्रियां-- बीबी अमरो जी एवं बीबी अनोखी जी प्राप्त हुईं।

श्री गुरु अंगद देव जी श्री गुरु नानक देव जी के अनन्य सिक्ख थे। सिक्ख धर्म के प्रचार-प्रसार के महान एवं पवित्र मिशन के प्रति उनकी भक्ति को देखते हुए श्री गुरु नानक देव जी ने उनको 'द्वितीय गुरु' के रूप में स्थापित करते हुए गुरु-पद प्रदान किया। श्री गुरु नानक देव जी ने भाई लहिणा जी को नया नाम 'अंगद' दिया।

२२ सितंबर, १५३९ ई. को श्री गुरु नानक देव जी के ज्योति-जोत समाने के पश्चात श्री गुरु अंगद देव जी करतारपुर छोड़कर खडूर साहिब चले गए। यहां आपने श्री गुरु नानक देव जी के मिशन सिक्ख धर्म का खूब प्रचार-प्रसार किया। श्री गुरु अंगद देव जी ने श्री गुरु नानक देव जी की बाणी को संभालकर रखा। आपने सिक्ख संगत को सुसंगठित किया तथा 'लंगर-प्रथा' को और दृढ़ता प्रदान की। गुरु जी ने गुरमुखी लिपि का निर्माण एवं विकास किया।

श्री गुरु अंगद देव जी ने ६३ सलोकों में बाणी-रचना की, जो कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संगृहीत हैं। आपकी बाणी में प्रेम और गुरु-भक्ति की प्रधानता है। आपके सलोकों में जीवन के अनेक सिद्धांतों, संकल्पों, पक्षों, भावनाओं और विचारों के संबंध में अनेक दृष्टिकोणों की स्पष्ट झलक दिखाई देती है। गुरु जी ने अपनी बाणी में गंभीर से गंभीर सिद्धांतों और विषयों को बड़ी सरलता व सादगी से व्यक्त किया है।

आपने सिक्ख पंथ को बल प्रदान करते हुए सैंकड़ों-हज़ारों नयी संगत को स्थापित किया। आपकी बाणी चाहे आकार में कम है, लेकिन इसमें दार्शनिक, धार्मिक और सामाजिक सभी विचार स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं।

श्री गुरु अंगद देव जी सृजनात्मक व्यक्तित्व के धनी थे, जिन्होंने श्री गुरु नानक देव जी द्वारा स्थापित परंपरा के अनुरूप अपने परलोक गमन करने से पहले बाबा अमरदास जी को गुरु-पद प्रदान किया। ४८ वर्ष की आयु में २९ मार्च, १५५२ को आप ज्योति-जोत समा गए।

**गार्डन कालोनी, वार्ड नं. १०, फतेहगढ़ चूड़ियां, ज़िला गुरदासपुर-१४३६०२; मो. ९४१७६-७७९४४*

पंथ खालसा भयो पुनीता प्रभ आगिआ कर उदित भए

*-डॉ. जगजीत कौर**

सन् १६९९ की वैसाखी के दिन शिवालिक की पहाड़ियों के मध्य सुरम्य, प्राकृतिक सुषमा से पूर्ण, शांत ऊंचाइयों पर बसे नगर श्री अनंदपुर साहिब के केसगढ़ नामक पावन स्थल पर एक ऐसा अद्भुत विचित्र करिश्मा हुआ जिसने कुल संसार के इतिहास को हिलाकर रख दिया। एक परमवीर, तेजस्वी, युगपुरुष परम पिता परमेश्वर की आज्ञा प्राप्त कर, वरद आशीष प्राप्त कर, मुख-मंडल पर असीम तेज और सुंदर सुडौल बलशाली व्यक्तित्व का स्वामी, हाथ में शमशीर चमकाते, लहराते हुए, शक्ति का आह्वान करते हुए, विश्व-इतिहास के रंगमंच पर आ प्रकट हुआ। यह था अद्भुत व्यक्तित्व 'मरद अगंमड़ा', जो धर्म, संस्कृति, भारतीय अस्मिता की रक्षा हेतु केवल नौ वर्ष की बाल-अबोध अवस्था में पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब का शीश हिंदोस्तान की रक्षा के लिए दान कर चुका था। सिक्खों के दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी मरद अगंमड़े ने विशाल एकत्रित जनसमूह के मध्य सिरों के दान का आह्वान करते हुए अमृत का बाटा तैयार किया, पाहुल-संस्कार कर खालसा पंथ की साजना की। कोई भी नर-नारी जाति, वर्ग, देश-काल की सीमा से तटस्थ इस अमृत-कुंड का भागीदार बन सकता था। शर्त थी तो केवल एक, *"सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥"* तब गुरु-चरणों पर न्यौछावर होने वाले मरजीवड़े दीवानों की संख्या बढ़ती गई। काफिला जुड़ता गया। दीवाने ऐसे कि *"मुख ते हरि चिति मै जुधु बिचारै ॥"* चित्त अकाल पुरख वाहिगुरु के नाम-सिमरन में जुड़ा हुआ और हाथ में शमशीर हो जुल्म, अत्याचार, अनाचार, धक्केशाही, अन्याय, अधिकारों के हनन का विरोध करने के लिए।

सदियों से गुलामी का जीवन जीते हिंदोस्तान के निवासी जुल्म, अत्याचार, अन्याय, अपमान, लांछना, जिल्लत सहने के आदी हो चुके थे। पर नहीं, अब और नहीं सहा जायगा। अब ऐसी कौम बनेगी जिसमें चिड़ियों द्वारा बाज़ तुड़ाए जायेंगे, सवा लाख के साथ लड़ने की हिम्मत एक में होगी। गुरुदेव जी ने मुर्दा लोगों को अमृत द्वारा पुनर्जीवित किया। इतिहास ने करवट बदली। कुल दुनिया हैरान हो दांतों तले उंगलियां दबाने लगी। यह क्या हुआ? यह कैसे हुआ?

छेलीअन मारे शेर किम, किम बटेरन मारे बाज?

'श्री गुर पंथ प्रकाश' के रचयिता भाई रतन सिंघ (भंगू) से अंग्रेज कप्तान मरे ने आश्चर्यचकित होकर पूछा कि इतनी बड़ी शक्तिशाली मुगल सत्ता को सिंघों ने कैसे तहस-नहस कर उनका नामो-निशान मिटा दिया और सिक्ख राज्य के झंडे झुलाए?

किम कर जट्टन शाह सूबे मारे।
शाह रय्यत ते किम कर हारे।
छेलीअन मारे शेर किम, किम बटेरन मारे बाज?
हाकम मारे रय्यतैं यह करमातहिं काज।

है भी आश्चर्यजनक ही! मुट्ठी भर खालसा पंथ, विरासत में कोई राज्य, शाही जागीर नहीं, तब *"सिंघन पायो राज किम औ दीनो किन*

**१८०१-सी, मिशन कम्पाऊण्ड, निकट सेंट मेरीज़ अकादमी, सहारनपुर (यू. पी.)-२४७००१, मो. ९४१२४-८०२६६*

पातिशाहु ॥३३॥" भाई रतन सिंघ जी का उत्तर है :

तिसै बात मैं ऐसे कही,
सिंघन पातिशाही शाहि सच्चै दई।
मरी कहयो शाह सच्चो कोइ?
असां कहयो शाह नानक जोइ ॥३४॥

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने ऐसी अमृत की शक्ति खालसा पंथ में भरी कि यह असीम शक्ति का प्रारूप बन गया :

जिन शाह नानक चरन प्रसाए।
तिन मैं शकति इती भई आए।
चिड़ीअन ते उन बाज कुहाए।
छेलन कोलों शेर तुड़ाए ॥३७॥

दसवें पातशाह ने अमृत की ऐसी घुट्टी भरी कि खालसा पंथ सदियों तक मौत से जूझता रहा, सिर कटते रहे, उबलते-खौलते पानी में 'समाधि' लेता रहा, अंग-अंग कटवाता रहा, चरखड़ियों पर चढ़ता रहा, भूखे-प्यासे बाल, वृद्ध, नर-नारी जंगलों में मारे-मारे फिरते रहे। न तो जुल्म के सामने घुटने टेके, न दीनता स्वीकार की, न अपने अकीदे, अपने धर्म-विश्वास से डोले-डिगे। अंततः दुश्मन को ही हार माननी पड़ी। सिंघों की विजय-गाथा एक स्वर्णिम इतिहास है जो अब्दाली के ही कथन से स्पष्ट है :

शाहि मुड़्यो बड नमोशी पाइ,
इस आवन को बहु पछुताइ।
कहि चिड़ीअन हम बाज दए गार,
करे छेलूअन हम शेर ख्वार ॥४३॥
इनकी मदद आप खुदाइ,
पुजयो न बल हम इन पर काइ।
इन मैं शकत किछ आहि करीम,
कर देखयो हम बहुत फहीम ॥४४॥
अब जो मेरो इत देश आउग,
जो आउग सो पच्छोताउग। *(पन्ना ५३५)*

जुल्म की इंतहा और विश्वास-शक्ति की अडिगता, यही है सिक्खों का इतिहास। सिक्ख गुरु-चरणों के सहारे नित्य चढ़दी कला में रहे। दशमेश जी ने ऐसी रूह फूंकी खालसा पंथ में कि *"गुरु की वडिआई नित चढ़ै सवाई।"*

चमकौर की गढ़ी में जब दो बड़े साहिबज़ादे पंथ पर कुर्बान हुए; दो नन्हे दुधमुंहे साहिबज़ादे ज़ालिमों द्वारा सरहिंद की दीवार में चिने गए; माता गुजरी जी शहीद हुईं, परिवार पूरा बिखर गया, फिर भी चढ़दी कला में विचरते मुक्तसर की जंग में विजय हासिल की। दमदमा साहिब कुछ समय टिक गुरुदेव जी दक्षिण की ओर गए और बाबा बंदा सिंघ बहादर को पंजाब की ओर भेजा, तब से ही अमृत की शक्ति का प्रभाव इतिहास ने प्रत्यक्ष होकर देखा।

'ज़फरनामा' विजय की घोषणा का पत्र औरंगज़ेब को भेजते हुए गुरु साहिब ने उसे चुनौती दी थी कि मैंने तुम्हारे घोड़े के पैरों तले एक ऐसी प्रचंड अग्नि प्रज्वलित कर दी है कि उस अग्नि के ताप में तुम ऐसे विचलित हो उठोगे कि तुम्हें शांति से खाना-पीना भी नसीब नहीं होगा। खालसा पंथ के रूप में एक ऐसा इंकलाब पैदा कर दिया गया कि जब तक खालसा पंथ रहेगा ज़ालिम आततायियों को चैन से मौत भी नहीं नसीब होगी। ऐसा ही हुआ। औरंगजेब पर तो ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह अपना मानसिक संतुलन ही खो बैठा, पंजाब की ओर आने का उसका साहस ही नहीं हुआ। इधर बाबा बंदा सिंघ बहादर ने दशमेश जी के परम ज्योति में लीन होने के ठीक दो वर्ष बाद ही छोटे साहिबज़ादों के कातिल सूबेदार नवाब वज़ीर खां को मारकर सरहिंद की ईंट से ईंट बजा दी। यही नहीं, उसने करनाल से लेकर लुधियाना तक के सभी इलाके अपने कब्जे में कर लिए। लोहगढ़ नामक नगर में खालसे की राजधानी कायम

की। श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नाम पर खालसई मुहर-युक्त सिक्के जारी किए। बाबा बंदा सिंघ बहादर की कमान तले सिंघों की शक्ति दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई।

आखिर दिल्ली के तख़्त पर मुगल बादशाह फरुख्सियर बैठा तो उसने मुगलई फौज भारी संख्या में भेज सिंघों को कब्जे में करना चाहा। सिंघ अत्यंत बहादुरी से लड़े। अंत में बाबा बंदा सिंघ बहादर को उसके साथियों सहित गिरफ्तार कर लिया गया। सिंघों के कटे सिरों से भरी गाड़ियां और जंज़ीरों में बंधे बाबा बंदा सिंघ बहादर को दिल्ली कोतवाली में पेश किया गया। दस-दस, बीस-बीस सिंघों के जत्थे रोज शहीद किए जाते और अंत में इस वीर बहादुर को बड़ी बेरहमी से नोच-नोचकर शहीद किया गया। बाबा बंदा सिंघ बहादर की शहादत के बाद सिंघों पर मुसीबतों के पहाड़ टूटने लगे।

सिंघ बाल-बच्चों सहित जंगलों में भूखे-प्यासे भटकते रहे। उनके सिरों के मूल्य निश्चित किए जाते। तत्कालीन मुस्लिम इतिहासकार और बाद के अंग्रेज इतिहासकार सभी एक मत हो यह मानते हैं कि एक भी गुरु का सिक्ख झुकने को तैयार नहीं हुआ। वे अंतिम सांस तक शौर्य, आत्म-शक्ति और गुरु के प्रति निष्ठा, विश्वास प्रकट करते हुए शहीदी का जाम पी जाते। एक-एक करके भी और सामूहिक तरीके से भी सिंघों को शहीद किया गया। सामूहिक शहादतों को सिक्ख इतिहास में 'घल्लूघारा' का नाम दिया गया है। छोटा घल्लूघारा, जिसमें लगभग ७००० सिंघ शहीद हुए और सिंघों की जान-माल का भी काफी नुकसान हुआ, सन् १७४६ ई में काहनूंवान के छंभ (गुरदासपुर) में घटित हुआ। फरुख्सियर की मौत के बाद जकरिया ख़ान को पंजाब का गवर्नर बनाया गया। यह छोटे-मोटे बहाने बनाकर सिंघों को शहीद करता रहा। इसी समय भाई तारा सिंघ डलवां और तब भाई तारू सिंघ जी को १७४५ ई में शहीद किया गया।

जकरिया ख़ान के बाद उसका पुत्र यहीआ ख़ान, जो अत्यंत ज़ालिम प्रवृत्ति का था, पंजाब का गवर्नर बना। उसने आते ही भाई सुबेग सिंघ और भाई शाहबाज सिंघ को चरखड़ियों पर चढ़ाकर शहीद किया। दो दुष्ट खत्री-- लखपत राय और उसके भाई जसपत राय को दीवान और फौजदार बना दिया। इन्होंने सिक्खों को मारकर उनका नामो-निशान मिटाने का संकल्प लिया। सिंघ कहां हारने वाले थे? जकरिया ख़ान के समय भी वे गुरिल्ला नीति से शाही खजाने को छीनकर जरूरतमंदों में बांटते रहे। वे हकूमत को चैन से नहीं बैठने देते थे। इधर हकूमत भी उनके पीछे लगी थी। एक टक्कर में लखपत राय के भाई जसपत राय का सिर उसके हाथी पर चढ़कर रंघरेटे भाई निबाहू सिंघ ने काट दिया। इस पर लखपत राय अत्यंत क्रोधित हुआ। उसने कसम खाई कि वो सिंघों का नामो-निशान मिटाकर ही दम लेगा। इस समय सिंघों का एक बड़ा जत्था, जिसकी संख्या लगभग १५००० के करीब थी, काहनूंवान के छंभ में छिपा बैठा था। लखपत राय ने ख़बर पाकर आ घेर लिया। सिंघ चारों ओर से घिर गए। उनके पास न राशन था, न असला। फिर भी सिंघों ने जान हथेली पर रखकर दुश्मनों का मुकाबला किया। कुछ जंगलों की ओर भागे, कुछ रावी दरिया पार कर रिआड़की गुरदासपुर की ओर निकल गए। फिर भी सिंघ-सिंघणियों और बच्चों का भारी खून बहा। कुछ सतलुज पार कर मालवे की ओर निकल गए। लगभग एक महीना सिंघों की धरपकड़ चलती रही। करीब तीन हज़ार सिंघों को पकड़कर लाहौर नखास चौक में शहीद किया गया। यह कत्लेआम सिंघों को

बहुत महंगा पड़ा। उनका भारी नुकसान हुआ। भारी तबाही के बावजूद सिंघों में स्वाभिमान और धर्म के लिए दिए जाने वाले बलिदान की भावना अत्यंत प्रबल हुई। उन्हें मरने की विधि आ गई, मौत का भय कहीं दूर भाग चुका था। वे धीरे-धीरे छिपे स्थानों से बाहर आने लगे। इसी बीच अहमद शाह दुर्रानी ने लाहौर पर कब्जा कर लिया। अव्यवस्थित राजनीति का सिंघों ने फिर फायदा उठाया। वे संगठित हो गए। पंथक विचारों में जोश और उत्साह जगा। दुर्रानी का रास्ता रोका गया। लाहौर, श्री अमृतसर, जलंधर आदि क्षेत्रों को जीत लिया गया।

सिंघ फिर नवोदित सूर्य की भांति दहकने-चमकने लगे। लाहौर के तख़्त पर सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया को बैठा दिया। इस दौरान १७६२ ई की दीवाली वाले दिन श्री अकाल तख़्त साहिब पर गुरमता पारित किया गया कि पंथ-विरोधियों को दंड दिया जाये, जिसमें प्रमुख जंडियाले के निरंजनीए थे। जंडियाला के आकल दास ने दुर्रानी को ख़बर कर दी। भारी फौज लेकर वह सिंघों पर चढ़ आया। इस समय सिंघों की संख्या चालीस हज़ार थी, जिसमें दस हज़ार स्त्रियां व बच्चे थे। जत्थेदार सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया और सरदार चढ़त सिंघ शुकरचक्कीए ने स्त्रियों और बच्चों को बचाने के लिए सिंघों को बीकानेर की ओर रवाना किया। इसकी ख़बर सरहिंद के हाकिम जैन ख़ान को मिली। मलेरकोटले का भीखन ख़ान भी आ मिला। सिंघ बरनाला से चार मील दूरी पर थे। ५ फरवरी, १७६२ ई को सुबह ही जंग शुरू हो गयी। सिंघों को घेर लिया गया। सिंघों के हौसले बुलंद थे। अब्दाली भी ३०००० सवार लेकर मैदान में आ गया। दुश्मन भारी गिनती में थे। सिंघ लड़ते, मुकाबला करते मलेरकोटला से १२ किलोमीटर दूर कुप्प रोहीड़ा पर इकट्ठा हुए। सिंघ बहादुरी से मुकाबला करते रहे। उनका भारी नुकसान हुआ। शहीद सिंघों की संख्या २०,००० से ५०,००० तक बताई जाती है। सरदार जस्सा सिंघ के शरीर पर २२ और स. चढ़त सिंघ के शरीर पर १९ जख़्म आए। जो सिंघ लड़ते-लड़ते बच निकले उनके शरीर पर भी भारी जख़्म थे। इतने पर भी सिंघ चट्टान की भांति अडोल रहे।

चार महीने बाद ही सिक्खों ने पुनः संगठित हो सरहिंद पर हमला किया और लाहौर को घेर लिया। इतने जख़्म सहकर, शहीदियां पाकर भी सिंघ गरजते रहे, कहते रहे-- "जो खोट था वो निकल गया है और अब 'तत्त खालसा' बच गया है, जो अपना राज कायम करेगा।"

तत्त खालसो सो रहयो गयो सु खोट गवाइ।
(पंथ प्रकाश)

डॉ. हरी राम गुप्ता के अनुसार सिक्ख ११ मार्च, १७८३ ई. को मुगल राजधानी दिल्ली में प्रवेश कर लाल किले में गए। दीवाने-आम में दाख़िल हो सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया को शाही तख़्त पर विराजमान कर दिया। वह दिन भी आया जब महाराजा रणजीत सिंघ ने पंजाब में सुदृढ़ 'खालसा राज्य' की स्थापना की। एक सदी तक सिक्ख शीश-दान देते रहे, अमृत की शक्ति से आगे बढ़ते रहे।

इसके बाद के काल में भी, चाहे वह ब्रिटिश राज्य हो या भारत की आज़ादी की जंग, सिंघ और शहादत पर्यायवाची शब्द बनकर रहे। १२ सितंबर, १८९७ ई. की सारागढ़ी की वह घटना भी इतिहास बनी जिसमें केवल २२ सिंघों ने बेमिसाल कुर्बानी देकर इतिहास को रोशन किया। इसके साथ ही अकाली लहर के मोर्चे हों, गुरुद्वारों की पावनता कायम रखने के लिए

(शेष पृष्ठ २१ पर)

वैसाखी और खालसा पंथ

-स. गुरिंदरपाल सिंह 'गोरा'

१६९९ ई की वैसाखी वाले दिन श्री अनंदपुर साहिब की धरती पर एक ऐसी आलौकिक घटना घटित हुई जो कि दुनिया की आंख ने न पहले कभी देखी थी और न ही शायद कभी देखनी है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज ने वैसाखी वाले दिन श्री अनंदपुर साहिब में बंद तंबू में क्या कौतुक रचाया, यह आज तक एक रहस्य बना हुआ है और भविष्य में भी इसके बारे में जानना असंभव ही होगा। इस रहस्यमयी करिश्मे में से निकली अमृतमयी ताकत ने एक-एक सिंघ को सवा-सवा लाख के साथ लड़ते हुए दिखाया। वैसाखी वाली घटना के फलस्वरूप मिले 'अमृत' को सिक्खों में से जिसने भी छका उसी की काया का कलप हो गया। वैसे तो हक तथा सच के लिए संघर्ष करने का जज़्बा पहले से ही सिक्खों में अंकुरित हो चुका था मगर 'अमृत' के रूप में मिली शक्ति से सिक्खों के मन में संघर्षरत रहते हुए मर-मिटने तक के ख़्याल घर करने लगे। साहिब-ए-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सिक्खों के अंदर आज़ादी एवं स्वाभिमान के साथ जीने की ऐसी ज्वाला प्रज्वलित कर दी जिसने जात-पात एवं ऊंच-नीच के भेदभाव वाली मुगल एवं विपरवादी नीतियों को भस्म कर समूह जगत को एक सूत्र में पिरोना आरंभ कर दिया।

खालसे की साजना का घटनाक्रम श्री गुरु नानक देव जी द्वारा निश्चित एवं आरंभित मिशन का अंतिम पड़ाव था। इसमें जरा भी संदेह नहीं कि जिस खालसा पंथ का जन्म श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के हाथों हुआ उसे तैयार करने में पूर्व गुरु साहिबान (नौ पातशाहियां) का भी अभूतपूर्व योगदान रहा है। पूर्व गुरु साहिबान ने 'खालसा' नामक मॉडल तैयार करने के लिए सिक्ख रूपी स्वर्ण को २०६ वर्ष (१४६९-१६७५ ई) तक प्रचार-सरगर्मियों की कुठाली में डालकर घोर परिश्रम से तैयार किया। फिर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सन् १६७५ ई में गुरगद्दी पर विराजमान होते ही सिक्ख रूपी स्वर्ण को २४ वर्ष तक और चमकाया तथा प्रथम वैसाख, सं. नानकशाही २३१ (१६९९ ई) को उसे वास्तविक स्वरूप प्रदान किया, जिसकी बनावट, जिसकी चमक-दमक, जिसकी सुंदरता, जिसकी मज़बूती, जिसका दृढ़ निश्चय, जिसका रंग-रूप, पहरावा व पहचान देखते ही बनती है। इतना लंबा समय लेकर तथा इतने कठिन संघर्ष के बाद तैयार हुआ 'खालसा' नर्म दिल होता हुआ भी जुल्म के पर्वतों को तोड़ समतल बनाने में आधुनिक बुल्डोज़र के समान था। खालसा पंथ के एक-एक वीर सिपाही की कीमत लगा पाना तत्कालीन राजा-बादशाह के वश में न था। खालसा पंथ को उसके उसूलों से अलग करके अपने वश में करना प्रत्येक उस बादशाह की भूल एवं सपना ही रहा जिसने खालसा पंथ के साथ टक्कर लेकर अपना आप गंवा लिया।

'मृत्यु' में से जन्म लेने वाला खालसा मृत्यु के साथ बातें करता रहा, क्योंकि खालसा पंथ के अनुयाइयों को पता था कि मृत्यु को सदा याद रखकर ही मनुष्य प्रभु से प्रीति कर सकता है, सच के मार्ग का पथिक बन सकता है तथा दृढ़ इरादे से निश्चित किए मिशन को फ़तहि कर

*५६३, प्रताप नगर, रेलवे रोड, कादियां, ज़िला गुरदासपुर(पंजाब)

सकता है। जो मरने से डरता है वो हर जुल्म के आगे झुक सकता है। पहले गुरु नानक साहिब ने अपने सिक्खों को और फिर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'खालसा' तैयार करते समय सिक्खों को मृत्यु को गले लगाने की शर्त को ही प्राथमिकता दी, तभी तो दशम पातशाह ने भरे दीवान में, ऊंचे स्वर में कहा कि "है कोई ऐसा सिक्ख जो अपना शीश भेंट कर सके? मुझे एक सिर की जरूरत है!" इस प्रकार गुरु जी ने बारी-बारी से कुल पांच सिर मांगे। गुरु जी को भली-भांति ज्ञात था कि जो जान की परवाह किए बिना धर्म, स्वाभिमान तथा मानवीय आज़ादी के लिए संघर्ष करने की हिम्मत दिखाएगा, वही इस जुल्म की आंधी को रोकने में मददगार साबित हो सकता है। यह गुरु नानक साहिब के कहे वचनों, *"जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥ सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥ इतु मारगि पैरु धरीजै ॥ सिरु दीजै काणि न कीजै ॥"* का प्रत्यक्ष प्रमाण था। २३० वर्षों के लम्बे समय में से गुज़रकर एक आम मनुष्य पहले सिक्ख, फिर सिक्ख से गुरमुख, फिर गुरमुख से संत, फिर संत के साथ-साथ सिपाही और आखिर में खालसा के रूप में सजकर दुनिया के सामने आया।

खालसा के लिए 'पांच ककार' उसके शरीर के आवश्यक अंग बिना दिए गए। खालसा को चार कुरहितों से बचने की सख़्त हिदायत की गई। खालसा को नए आदर्श, नए निशाने, नए नियम, नए पहरावे का धारणी बना दिया गया। खालसा को सच का पक्का नेमी बना दिया गया। साथ में फरमाया कि खालसा ने बोलना भी सच, देखना भी सच, सोचना भी सच तथा कार-विहार भी सच्चा ही करना है। खालसा के विधान में जहां जुल्म करना पाप है, वहां जुल्म सहना भी पाप है। खालसा ने सदा अकाल पुरख की रज़ा में रहना है। कृपाण का प्रयोग करना है अपने तथा पराए अधिकारों की रक्षा के लिए और जुल्म के खातिमे के लिए। हमेशा सरबत्त के भले की अरदास करना भी खालसा का एक प्रमुख गुण है।

दशमेश पिता ने खालसे की साजना करके ऊंच-नीच, जात-पात, वहमों-भ्रमों, अंधविश्वासों तथा मिथ्या कर्मकांडों के व्यवहार पर ज़ोरदार ढंग से वार किए। *"सभे साझीवाल सदाइनि"* के अनुसार प्रत्येक तरह के भेदभाव खत्म कर सबको एक ही प्लेटफार्म पर लाकर खड़ा करने का यत्न किया। समाज में किए गए श्रेणी-विभाजन के आधार पर हो रही लूट-खसूट को बंद किया।

दशमेश पिता के रणजीत नगाड़े के सर्वपक्षीय अज़ादी के संदेश देते डंके बजने की देर थी कि हज़ारों वर्षों से गुलामी के बोझ तले दबे मज़लूम आज़ादी की फिज़ा का आनंद उठाने लगे। मज़लूमों की गुलामी शारीरिक एवं मानसिक दोनों तरह की थी। विपरवाद द्वारा दुत्कारे गए तथाकथित नीची जाति के लोग, जिन्हें मनुष्य कहलवाने का भी अधिकार नहीं रहा था, अमृत की लहर शुरू होते ही गुल की भांति खिल उठे। उनमें नई ताकत जग गई। उनके अंदर भी पहली बार स्वाभिमान भरा जीवन जीने की उमंग जाग उठी। समाज के तथाकथित उच्च वर्ग द्वारा दुत्कारे हुए एवं बुज़दिल बनकर जीवन बसर कर रहे लोग अब खालसा फौज के बहादुर सिपाहियों में गिने जाने लगे। समय बीता, आज़ादी की लहर ऐसी प्रचंड हुई कि खालसा ने हमलावरों एवं ज़ालिमों को कंधार से पार धकेलकर खालसाई निशान झुला दिए।

खालसा पंथ सजने के बाद केवल पुरुष ही नहीं स्त्रियों ने भी धर्म-देश की आज़ादी की जंग में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। श्री गुरु नानक देव जी ने दुनिया के इतिहास में पहली बार स्त्री को पुरुष के समान रुतबा दिया। श्री गुरु अमरदास जी ने सती-प्रथा एवं परदा-प्रथा को खत्म करके स्त्री के अधिकारों में और बढ़ोत्तरी कर दी। श्री गुरु

गोबिंद सिंघ जी ने तो अमृत छकाकर जहां पुरुष को शेर का रूप दिया वहीं अमृत छककर सिक्ख स्त्रियां भी खुद को शेरनी समझने लग गईं। सिक्ख इतिहास के पन्ने पलटें तो बहादुर सिंघणियों के बहादुरी भरे कारनामों को पढ़कर स्त्री वर्ग के प्रति गर्व महसूस होता है। वर्णननीय है कि यह केवल दशमेश जी के अमृत का ही कमाल था और यह कमाल दिखता भी केवल सिक्ख धर्म की स्त्रियों में ही है। जो कार्य गत हज़ारों वर्षों में कोई न कर सका वो दशमेश पिता के सजाए खालसे ने आधी सदी से भी कम समय में कर दिखाया।

गुरु साहिबान की शिक्षाओं को सम्मुख रखकर चलने वाले खालसे के दृढ़ इरादे, धैर्य एवं साहस के आगे दुनिया की कोई भी ताकत टिक न सकी। ज़ालिमों की आग की भट्ठियां खालसे के इरादों को जला न सकीं; आरे खालसे के विश्वास को चीर न सके; जेलें-कैदें खालसे के आज़ाद मनसूबों को कैद न कर सकीं; खालसे की अडोलता को गाड़ियों के इंजन, गोलियां, लाठियां भी थर्रा न सकीं। क्या हुआ यदि खोपरी उतर गई, मगर गुरु के साजे-निवाजे खालसे ने केशों की हिफ़ाजत कर सिक्खी स्वरूप को धब्बा नहीं लगने दिया। खालसे ने शरीर के बंद-बंद तो कटवा लिए मगर सिक्खी के गुलज़ार को उजड़ने न दिया। खालसे ने रूई में लिपटकर जलना तो स्वीकार कर लिया मगर सिक्खी की बगिया को आंच तक न लगने दी। अमृत की शक्ति क्या मिली, खालसा हर इम्तिहान में, जुल्म की हर आंधी-तूफान में पहले से भी कहीं ज्यादा आभा लिए प्रकट होता रहा।

खालसे का जन्म शीश-भेंटा की कसौटी में से हुआ है और गुरु साहिबान की शिक्षाओं पर इसका मज़बूत इरादा खड़ा है। जो कौम पैदा ही मृत्यु में से हुई हो उसे भला कैसा मृत्यु का भय देना! ऐसी कौम को न लोभ में लाकर तथा न ही मृत्यु का भय देकर, न तो कोई झुका सका है और न ही कोई झुका पाएगा। ❂

पंथ खालसा भयो पुनीता . . . *(पृष्ठ १८ का शेष)*

ननकाणा साहिब का मोर्चा, चाबियों का मोर्चा, जैतो (गंगसर) का मोर्चा, सिंघ अपनी बहादुरी और अमृत की शक्ति की मिसालें पेश करते रहे हैं। भारत की आज़ादी में सिक्खों का योगदान अपूर्व है। इन्होंने शहादतें देकर देश को आज़ाद कराया। भारत-पाक युद्ध; चीन-भारत का युद्ध, कारगिल की लड़ाई, सिक्खों की वीर-गाथा को बयान करते हैं। १९४७ ई के तूफान उठे। आज़ाद भारत में १९८४ ई का घल्लूघारा हुआ। सिक्खों का निश्चय अडोल है, क्योंकि उनकी आस्था गुरु-चरणों पर टिकी हुई है। प्रसिद्ध इतिहासकार एन. के. सिन्हा अब्दाली की बात करता हुआ लिखता है कि "सिक्खों को पूरी तरह नष्ट-भ्रष्ट करने लिए हमें उस दिन का इंतजार करना पड़ेगा जब तक इनका धार्मिक उत्साह समाप्त नहीं होता।" ***(For the total destruction of Sikhs Power it would be necessary to wait until their religious fervour had eveporated) (Rise of Sikh Power Ed. II, P. 67.)***

जब तक सिक्ख गुरु-चरणों से जुड़ा है, उसकी ऊर्ध्वमुखी मानसिकता, उसका धार्मिक निश्चय, उसकी आंतरिक शक्तियां इसी तरह उत्तेजित रहेंगी। वह देश-विदेश सर्वत्र, संपूर्ण विश्व-ब्रह्मांड पर तेजवान सूर्य की भांति चमकता रहेगा। ❂

शेख़ फरीद जी के नैतिक जीवन-आदर्श

-डॉ. नवरत्न कपूर*

जीवन-परिचय : सूफ़ी मत के पितामह की उपमा से विख्यात शेख़ फरीद जी का जन्म ५६९ हिजरी (सन् ११७३) के रमज़ान महीने की पहली तारीख को मुलतान (अब पाकिस्तान) के समीपस्थ 'खोतवाल' नामक ग्राम में हुआ था। उनकी माता का नाम करसूम खातून था, जिन्हें 'मरियम' उपनाम से पुकारा जाता था। शेख़ फरीद जी के पिता का नाम काजी जमालुद्दीन सुलेमान था। माता-पिता ने अपने बेटे का नाम फरीदुद्दीन मसऊद रखा था। एक जनश्रुति के अनुसार शेख़ फरीद जी को बचपन से शक्कर खाने का बहुत शौक था। उनकी माता रात्रि में बेटे के तकिए के नीचे शक्कर की पुड़िया बांधकर रख देती थी और सुबह नमाज़ पढ़ने के बाद उसे प्रसाद (रब्बी बख़्शिश) के रूप में दे देती थी। इस कारण उनके नाम के साथ 'शकरगंज' अथवा 'गंज़-ए-शकर' उपमा भी जुड़ गई। अपनी माता की आध्यात्मिक प्रेरणा के कारण शेख़ फरीद जी को बचपन से 'इबादत' (पूजा-पाठ) का शौक हो गया था। इसी कारण उनके गांव के लोग उन्हें 'काजी बच्चा दीवान' भी पुकारने लगे थे।

'फरीद' अरबी भाषा का विशेषण-वाचक शब्द है, जिसका अर्थ है-- 'अद्वितीय।[१] 'रमज़ान' मुस्लिम जगत में प्रचलित इस्लामी संवत्सर (हिजरी सन्) का नौवां महीना है। इस महीने में मुसलमान दिन भर रोज़ा (निराहार व्रत) रखते हैं और रात में तरावीह (रात की नमाज़ में कुरान की वाक्यावली) सुनते या पढ़ते हैं।[२] इस प्रकार पूरे महीने में समूचे कुरान शरीफ का संपूर्ण पाठ समाप्त कर लिया जाता है। संयोगवश उन्होंने कुछ वर्ष तक आरंभिक शिक्षा अपने पैतृक गांव 'खोतवाल' में प्राप्त की। तदनंतर उनके माता-पिता मुलतान नगर में आ गए। वहां पर १८ वर्ष की अवस्था तक शेख़ फरीद जी ने एक मदरस्से (मुस्लिम विद्यालय) में धार्मिक शिक्षा प्राप्त की, जिसके फलस्वरूप उन्हें कुरान शरीफ का समूचा पाठ स्मरण हो गया।

सूफी मत के चिश्ती संप्रदाय के संस्थापक हज़रत मुईन-उद-दीन चिश्ती अजमेर वालों के शिष्य मुमताज खलीफा मुलतान आए तो शेख़ फरीद जी उनके दर्शनार्थ पहुंचे। वे खलीफा साहिब के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उनके साथ दिल्ली चलने के लिए तैयार हो गए, जहां कि मुमताज साहब चिश्ती संप्रदाय के उप-संचालक थे। मुमताज खलीफा साहब का असली नाम हज़रत कुतबुद्दीन बख़्तयार काकी था। उन्होंने शेख़ फरीद जी को समझाया कि अभी उनकी अवस्था प्रचारक बनने की नहीं, इसलिए उन्हें अपनी शिक्षा जारी रखनी चाहिए। शेख़ फरीद जी ने उनकी आज्ञा का पालन किया और मक्का की यात्रा भी की। शेख़ फरीद जी का मन अधिक दिन तक दुनियावी कामों में न लगा और वे काकी साहिब के दर्शन के लिए स्वत: पहुंच गए। कुछ समय तक काकी साहब

*बी-१८०१, प्लाट नं. १०६, तुलसी सागर हाऊसिंग सोसाइटी, सेक्टर-२८, नेरूल, नवी मुंबई-४००७०६, मो ०२२-२७७२९६९६

ने उनके आध्यात्मिक ज्ञान की परीक्षा लेने के पश्चात उन्हें 'हुजरा' (गुरु-मंत्र) दे दिया। इस प्रकार कई वर्ष बीत गए। जब एक बार हज़रत मुईन-उद-दीन चिश्ती अजमेर से अपने संप्रदाय के केंद्र-स्थल के प्रतिनिधि मुमताज खलीफा को दिल्ली में मिलने आए तो उन्होंने शेख़ फरीद जी को वहां देखकर कहा, "बख़्तयार! तुमने ऐसा बाज़ पकड़ा है, जो सातवें आसमान से नीचे अपना घोंसला कभी नहीं बनाएगा। यह एक ऐसा चिराग (दीपक) है, जिससे दरवेशों का सिलसिला रोशन होता रहेगा।"

अपने संप्रदाय की नई शाखा हांसी (आधुनिक हरियाणा) में खोली जाने पर चिश्ती साहब और काकी साहब ने एकमत होकर शेख़ फरीद जी को वहां का धर्म-प्रचारक नियुक्त कर दिया, जहां वे लगभग बीस वर्ष तक रहे।[३] जब शेख़ फरीद जी के गुरु हज़रत बख़्तयार काकी का देहांत हुआ तो वे हांसी में थे। जब अत्यंत विलंब से उन्हें यह दुखद समाचार प्राप्त हुआ तो वे दिल्ली पहुंचे और सीधे उनकी मज़ार पर गए। काकी साहब अपने देह-त्याग से पूर्व दिल्ली के काजी हमीदुद्दीन नागौरी को अपनी अंतिम इच्छा प्रकट कर गए थे कि उनके बाद शेख़ फरीद जी को चिश्ती संप्रदाय की गद्दी सौंपी जाए। अत: धार्मिक उत्तराधिकारी के रूप में नागौर साहब ने काकी साहब से प्राप्त गुदड़ी, पगड़ी तथा असा (हाथ में पकड़ने वाली लकड़ी) जैसे मुखिया पदवी के प्रतीकात्मक चिन्ह शेख़ फरीद जी को सौंप दिए। तब से वे दिल्ली में रहने लगे।[४] शेख़ फरीद जी के चिश्ती संप्रदाय की मुख्य गद्दी के मालिक बन जाने पर दिल्ली के सूफी श्रद्धालु उनके सम्मान में अपने-अपने घरों में प्रतिभोजों का आयोजन करने लगे। विनम्रतावश शेख़ फरीद जी उन दावतों में शामिल होते, किंतु इससे उनकी नमाज़ और कुरान-पाठ के अतिरिक्त बाणी-रचना में विघ्न पड़ने लगा। इन सभी बातों से उकताकर वे हांसी लौट आए और वहां के निवासी अपने प्रिय शिष्य शेख़ जमालुद्दीन हांसवी को अपना 'खलीफा' (प्रतिनिधि) बनाकर अपने जन्म-स्थान खोतवाल की ओर चल दिए। खोतवाल में कुछ दिन टिकने के पश्चात वे अजोधन (पाकपटन) में जा बसे और सन् १२६५ में वहीं पर शरीर त्याग गए।[५]

साहित्यिक देन : प्रोफेसर खलीक अहमद निज़ामी के अनुसार शेख़ फरीद जी ने अरबी, फारसी और कुछ स्थानीय उप-भाषाओं में बाणी-रचना की थी।[६] निज़ामी साहब के अतिरिक्त डॉ. मोहन सिंघ दीवाना[७], प्रो. मुहम्मद शीरानी[८] तथा डॉ. अब्दुल हक[९] ने अपनी पुस्तकों में उनकी कुछ रुबाइयां और दोहड़े (दोहे) अंकित किए हैं। इन रचनाओं की प्रमाणिकता के बारे में विद्वानों में मतभेद हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शेख़ फरीद जी के ११२ सलोक और ४ सबद संकलित हैं। इनमें से दो सबद 'राग आसा' में और अन्य दो 'राग सूही' में विद्यमान हैं। उनकी बाणी में इसलामी शरीअत (इसलामी धर्म-शास्त्र) तथा तस्सवुफ (**sufism**) के साथ-साथ सांसारिक जीवन की झलक भी मिलती है। उनका अरबी, फारसी, उर्दू तथा पंजाबी की उप-भाषा 'लहिंदी' पर भरपूर अधिकार था।

नैतिक जीवन-आदर्श : विश्व के सभी धर्मों में नैतिकता पर बल दिया जाता है। कहते हैं कि यदि मनुष्य जीवन में नैतिक मूल्यों को नहीं अपनाता तो वह शीघ्र ही धार्मिकता से भटक जाता है। मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता है कि वह अपने कुकर्मों एवं दुर्गुणों की ओर ध्यान नहीं

देता और दूसरों की कमियों की गिन-गिनकर निंदा करने लगता है। वस्तुत: इस मानसिक भटकन से मुक्ति पाने के लिए शेख़ फरीद जी ने विवेक बुद्धि अपनाने पर बल दिया है। एत्दर्थ उनका कथन है :

फरीदा जे तू अकलि लतीफु काले लिखु न लेख ॥
आपनड़े गिरीवान महि सिरु नींवा करि देखु ॥
(पन्ना १३८४)

इस प्रकार वे इस बात पर बल देते हैं कि मनुष्य को केवल अपने पर गर्व करके दूसरों की निंदा नहीं करनी चाहिए, बल्कि अपने हृदय में झांककर अपने अवगुणों को पहचानना चाहिए। शेख़ फरीद जी की बाणी में जिन नैतिक मूल्यों को अपनाने पर ज़ोर दिया गया है, वे इस प्रकार हैं :

नम्रता : 'नम्रता' एक ऐसा सद्गुण है जो अभिमान भावना पर अंकुश लगाने में समर्थ होता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में इस नैतिक गुण पर विशेष बल दिया गया है। शेख़ फरीद जी ने ईश्वर-प्राप्ति के लिए नम्रता और सहनशीलता को मानव का सर्वोच्च सद्गुण कहा है, यथा :

फरीदा जो तै मारनि मुकीआं तिन्हा न मारे घुंमि ॥
आपनड़ै घरि जाईऐ पैर तिन्हा दे चुंमि ॥
(पन्ना १३७८)

शेख़ साहिब का कथन है कि मनुष्य को "*इस हाथ ले, उस हाथ दे*" वाली कठोरता जीवन में नहीं अपनानी चाहिए, बल्कि उसे तो 'दर्भ' (पवित्र 'कुशा' नामक घास) की भांति नम्र होना चाहिए। बुरे व्यक्ति को लताड़ने की बजाय समझा-बुझाकर प्रभु-भक्ति से जोड़ने का प्रयास सज्जन पुरुष को करना चाहिए। ऐसा संदेशवाहक उनका पद निम्नलिखित है :

फरीदा थीउ पवाही दभु ॥
जे सांई लोड़हि सभु ॥
इकु छिजति बिआ लताड़ीअहि ॥
तां साई दै दरि वाड़ीअहि ॥ (पन्ना १३७८)

वस्तुत: शेख़ फरीद जी 'क्रोध' को एक शारीरिक रोग मानते हैं और छोटी-छोटी बात पर क्रोधशील व्यक्ति को उससे बचने के लिए समझाते हैं, यथा :

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ ॥
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ॥
(पन्ना १३८१)

आत्म-संतोष : श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आत्म-संतोष की महिमा सब्र, तृप्ति आदि शब्दों से कई स्थलों पर बताई गई है। वही परंपरा शेख़ फरीद जी के कथनों में भी झलकती है। वे मनुष्य को जीवन में संतोषी बनने के लिए प्रेरित करते हुए कहते हैं कि जो लोग सदा आत्म-संतुष्ट (साबरी) रहते हैं, वे किसी की वृद्धि देखकर जलते-भुनते नहीं। वस्तुत: यह सद्गुण ईश्वर के परम भक्तों के पल्ले में ही होता है। एत्दर्थ शेख़ साहिब के मनोहर वचन सुनिए :

सबर अंदरि साबरी तनु एवै जालेन्हि ॥
होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि ॥
(पन्ना १३८४)

जैसे कमान की रस्सी पर तीर रखकर निशाना साधा जाता है, मनुष्य को चाहिए कि उसी प्रकार संतोष (सब्र) को अपने जीवन का लक्ष्य माने। ईश्वर-प्राप्ति (खालक) के इच्छुक में तो ऐसा सद्गुण अवश्यमेव होना चाहिए और इससे दूर रहने की खता कदापि नहीं करनी चाहिए, यथा :

सबर मंझ कमाण ए सबरु का नीहणो ॥
सबर संदा बाणु खालकु खता ना करी ॥
(पन्ना १३८४)

संतोषी जीव की तुलना उन्होंने एक विशाल नदी (दरिया) से की है, जिसका जल कभी घटता नहीं बल्कि (वर्षा ऋतु में) उसमें निरंतर वृद्धि होती रहती है, यथा :

सबरु एहु सुआउ जे तूं बंदा दिड़ु करहि ॥
वधि थीवहि दरीआउ टुटि न थीवहि वाहड़ा ॥
(पन्ना १३८४)

सद्मार्ग-गमन : शेख़ फरीद जी मनुष्य को समझाते हैं कि उसे कभी भी बुरे कामों में लिप्त होकर अपनी होशियारी नहीं दिखानी चाहिए; बल्कि अपने दोषों को स्वयं पहचानना चाहिए :

फरीदा जे तू अकलि लतीफु काले लिखु न लेख ॥
आपनड़े गिरीवान महि सिरु नींवां करि देखु ॥
(पन्ना १३७८)

जो लोग बुरे कामों में लिप्त होते हैं ईश्वर उन्हें इसी प्रकार शिक्षा देते हैं, जैसे कोयले को हांडी में जला दिया जाता है अथवा गन्ने को कोल्हू में दबा दिया जाता है। इस भाव का सूचक शेख़ फरीद जी का सलोक निम्नलिखित है :

कमादै अरु कागदै कुंने कोइलिआह ॥
मंदे अमल करेदिआ एह सजाइ तिनाह ॥
(पन्ना १३८०)

इसलिए शेख़ फरीद जी मनुष्य को समझाते हैं कि जो गुणहीन (निरर्थक) कार्य हैं उन्हें भुला देना चाहिए अन्यथा ईश्वर के दरबार में कुकर्मों का फल भुगतते समय शर्मिंदा होना पड़ेगा, यथा :

फरीदा जिन्ही कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि ॥
मतु सरमिंदा थीवही सांई दै दरबारि ॥
(पन्ना १३८१)

वस्तुत: सच्चा ईश्वर-भक्त वही कहलाता है जो बुद्धिमान होने पर भी भोलेभाले बालक (इआणा) के समान व्यवहार करता है; शक्तिशाली होने पर भी अपने आप को विनम्र (निताणा) समझता है; जो अभावग्रस्त होने पर भी दानशीलता *(अणहोदे आपु वंडाए)* में पीछे न रहे। यह अर्थवाचक सलोक है :

मति होदी होइ इआणा ॥
ताण होदे होइ निताणा ॥
अणहोदे आपु वंडाए ॥
को ऐसा भगतु सदाए ॥ *(पन्ना १३८४)*

संदर्भ-सूची :

१. मुहम्मद मुस्तफा खां मद्दाह : उर्दू-हिंदी शब्द कोश, प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, सन १९५९, पृष्ठ ३९२,

२. तत्रैव, पृष्ठ ५६९

३. **Khaliq Ahmad Nizami : The Life & Times of Sheikh Farid-ud-din Ganj-e-shakar, 1955, Page 32.**

४-६. **Ibid, Page 84.**

७-९. डा. गुरबख़श सिंघ पिआसा, (पंजाबी पुस्तक) बाबा फरीद जी, सन् २००३, पृष्ठ १२-१४
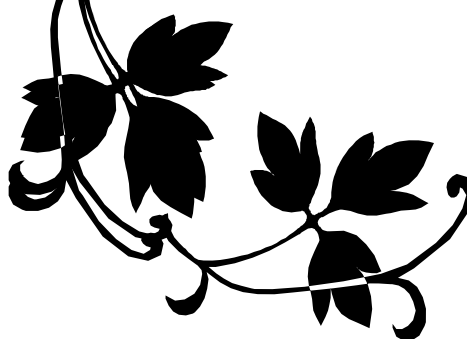
भक्त धंना जी

*-बीबी रजवंत कौर**

संस्कृत भाषा के शब्द 'भक्त' से अभिप्राय है-- 'सेवक'। भाई वीर सिंघ जी के अनुसार, "भक्त वो प्रेमी है जो प्रीतम प्रायण हो तथा जो अपना सब कुछ परमेश्वर को अर्पित करे।[१] श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जिन पंद्रह भक्त साहिबान की बाणी दर्ज है उनकी पदवी का निर्णय दो ढंगों से हो सकता है-- एक श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'भक्त' की व्याख्या द्वारा और दूसरा इस कारण कि पंचम पातशाह जी ने उनकी रचना को प्रवान कर श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज किया है। सिक्खों का मस्तक गुरु साहिबान के साथ-साथ भक्त साहिबान की बाणी के आगे भी झुकता है। इन पंद्रह भक्त साहिबान में भक्त धंना जी भी शामिल हैं।

भक्त धंना जी के जन्म के बारे में सभी विद्वानों की एक राय है। इससे स्पष्ट होता है कि आप जी का जन्म राजस्थान के इलाके टांक के गांव धूआन (जो देउली से २० मील दूर है) में १४१६ ई में हुआ। आप तथाकथित जाट वर्ग में से थे तथा खेतीबाड़ी करते थे। बचपन में आप पशु चराया करते थे। बचपन से ही अच्छे आचरण तथा धर्म की किरत (कमाई) करते थे। साधुओं का संग करना, उनकी सेवा करना, बांटकर छकना आप जी का स्वभाव था। ज्ञानी गुरदित्त सिंघ ने खुद इनके जन्म-स्थान की यात्रा की और परिणामस्वरूप कहा, "२९ मार्च, १९७३ ई को मैं भक्त जी के जन्म नगर बड़ा धूआं (धूआन, राजस्थान) गया। पता चला कि यहां जाटों के केवल तीन घर हैं। भक्त धंना जी की वंश (औलाद) में कोई नहीं था। वैसे भक्त जी की ज़मीन में पार्टी अर्थात् गांव में हिस्सा है। ज़मीन बेआबाद पड़ी है। एक साइकिल सवार की मदद से गांव की पूर्व दिशा में शुष्क पहाड़ियों की बगल में मैं भक्त धंना जी की ज़मीन पर पहुंचा। ज़मीन में दो-तीन जंगली वृक्ष, जंड तथा जंडियां हैं। बीच में तीन-चार चारपाई के बराबर चूने से पुता हुआ चबूतरा है। कहा जाता है कि यहां भक्त धंना जी गाय चराया करते थे। इलाका पछड़ा हुआ है। गांव में भक्त धंना जी का कोई स्थान नहीं, यात्रियों के रहने के लिए कोई प्रबंध नहीं। प्राचीन समय के घर का भी पता नहीं चलता। यात्री दूर-दूर से आते हैं और भक्त धंना जी के खेतों से मिट्टी लेकर जाते हैं।[२]

भक्त धंना जी की पृष्ठभूमि जयपुर ज़िले के 'डिगी किशनगढ़' गांव की बतायी जाती है। भक्त धंना जी की वंश की स्तुति करने वाला एक भट्ट भी है। वह जमालपुर रोड पर गांव जराणे में रहता है। वह भक्त धंना जी के चमत्कारी प्रसंग सुनाता है। भक्त धंना जी के बारे में उनके नगर के लोगों द्वारा कई चमत्कारी कथा-कहानियां सुनाई जाती हैं। भक्त धंना जी के सम्बंध में मुख्यत: दो रिवायती साखियां प्रचलित हैं, जो चमत्कारी होने के साथ-साथ श्रद्धा-भावना से ओत-प्रोत हैं।

भक्त धंना जी को परमार्थ की लगन बढ़ती गयी और वे संतों-साधुओं के साथ मिलकर बनारस (काशी) में पहुंच गए तथा भक्त रामानंद जी से गुरु-दीक्षा ली। भक्तमाल में भी भक्त रामानंद जी को ही भक्त धंना जी का गुरु कहा गया है। डॉ राय जसबीर सिंघ ने 'सैण सागर' ग्रंथ के हवाले

**४५२-बी, संधू कॉलोनी, छेहरटा, श्री अमृतसर-१४३००५, मो ८१४६६-५०४४९*

से बताया है कि भक्त धंना जी ने अन्य समकालीन भक्त साहिबान-- भक्त त्रिलोचन जी, भक्त सैण जी के साथ मिलकर काशी से चलकर, गोकुल, जगन्नाथ, बीठुल, श्रीनगर की यात्रा की तथा बाणी-गायन किया। *(धंना भगत, पृष्ठ २०४)*

भक्त धंना जी द्वारा उच्चरित तीन शबद श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं। 'आसा' राग में दो तथा 'धनासरी' राग में एक शबद है। भक्त धंना जी राग 'आसा' में फरमान करते हैं :

गिआन प्रवेसु गुरहि धनु दीआ धिआनु मानु मन एक मए ॥
प्रेम भगति मानी सुखु जानिआ त्रिपति अघाने मुकति भए ॥३॥
जोति समाइ समानी जा कै अछली प्रभु पहिचानिआ ॥
धंनै धनु पाइआ धरणीधरु मिलि जन संत समानिआ ॥
(पन्ना ४८७)

अर्थात् जिस मनुष्य को गुरु ने ज्ञान का प्रवेस रूप धन दिया उसकी सुरति प्रभु में जुड़ गई; उसके अंदर श्रद्धा बन गयी; उसका मन प्रभु से एक हो गया; उसको प्रभु का प्यार, प्रभु की भक्ति अच्छी लगी; उसकी सुख के साथ सांझ बन गयी; वह संतुष्ट हो गया तथा बंधनों से मुक्त हो गया। जिस मनुष्य के अंदर प्रभु की सर्वव्यापक ज्योति टिक गयी, उसने माया में न छले जाने वाले प्रभु को पहचान लिया। मैंने (भक्त धंना जी) भी धरती के आश्रय पर प्रभु का नाम-धन ढूंढ लिया है। मैं (भक्त धंना जी) भी संत-जनों से मिलकर प्रभु में लीन हो गया हूं।

इस शबद से स्पष्ट हो जाता है कि परमात्मा की प्राप्ति (सच्चे) गुरु के द्वारा ही होती है। भक्त धंना जी अपनी आप-बीती सुनाते हैं कि मैं संत-जनों से मिलकर ही प्रभु में लीन हुआ हूं। दूसरा शबद, जो 'आसा महला ५' के शीर्षक के अंतर्गत हैं, इसमें गुरु जी ने फरमाया है कि भक्त धंना जी ने भक्त नामदेव जी, भक्त कबीर जी, भक्त सैण जी, भक्त रविदास जी की तरह भक्ति-मार्ग पर चलकर परमपद प्राप्त किया है :

गोबिंद गोबिंद गोबिंद संगि नामदेउ मनु लीणा ॥
आढ दाम को छीपरो होइओ लाखीणा ॥रहाउ॥
बुनना तनना तिआगि कै प्रीति चरन कबीरा ॥
नीच कुला जोलाहरा भइओ गुनीय गहीरा ॥
रविदासु ढुवंता ढोर नीति तिनि तिआगी माइआ ॥
परगटु होआ साधसंगि हरि दरसनु पाइआ ॥२॥
सैनु नाई बुतकारीआ ओहु घरि घरि सुनिआ ॥
हिरदे वसिआ पारब्रहमु भगता महि गनिआ ॥३॥
इह बिधि सुनि कै जाटरो उठि भगती लागा ॥
मिले प्रतखि गुसाईआ धंना वडभागा ॥४॥
(पन्ना ४८७)

भक्त धंना जी दयाल, दमोदर परमेश्वर का स्मर्ण करने की प्रेरणा करते हुए दृष्टांत देकर बताते हैं कि माता के शरीर में पेट की अग्नि तथा पानी के अंदर सब जीवों को जो परमात्मा आहार देता है, वह समर्थ है। कछुआ (मादा) पानी में रहती है, किंतु उसके बच्चे बाहर रेत में पलते हैं। न तो वह दूध पिलाती है और न ही उसके बच्चों के पंख होते हैं, जो उड़कर अपना आहार कर सकें। प्रभु उन बच्चों का पालन-पोषण करते हैं। पत्थर में कीड़ा होता है। उसका वहीं पालन-पोषण होता है। इस शबद में सब जीवों को पालने वाले पालनहार के सिद्धांत की पुष्टि की जाती है :

रे चित चेतसि की न दयाल दमोदर बिबहि न जानसि कोई ॥
जे धावहि ब्रहमंड खंड कउ करता करै सु होई ॥१॥रहाउ॥
जननी केरे उदर उदक महि पिंडु कीआ दस दुआरा ॥
देइ अहारु अगनि महि राखै ऐसा खसमु हमारा ॥
कुंमी जल माहि तन तिसु बाहरि पंख खीरु तिन नाही ॥
पूरन परमानंद मनोहर समझि देखु मन माही ॥२॥

पाखणि कीटु गुपतु होइ रहता ता चो मारगु नाही ॥
कहै धंना पूरन ताहू को मत रे जीअ डरांही ॥
(पन्ना ४८८)

भक्त धंना जी का तीसरा शबद, जो धनासरी राग में 'आरता' शीर्षक से है, में प्रभु से रोज़ाना जीवन की जरूरतें-- दाल, सीधा (कच्ची सामग्री), घी, जूता, कपड़ा, अच्छी अरबी घोड़ी तथा सुंदर गृहणी की याचना की है; अनाज, दुधारू गाय-भैंस मांगी है। भक्त धंना जी को भक्ति करने के लिए शारीरिक खुराक-अन्न, नित्यप्रति प्रयोग वाली वस्तुओं की भी जरूरत है। भक्तों के कार्य संवारने वाले प्रभु के आगे इन्होंने निस्संग अरदास की है :

गोपाल तेरा आरता ॥
जो जन तुमरी भगति करंते तिन के काज सवारता ॥१॥रहाउ॥
दालि सीधा मागउ घीउ ॥ हमरा खुसी करै नित जीउ ॥
पन्हीआ छादनु नीका ॥ अनाजु मगउ सत सी का ॥१॥
गऊ भैस मगउ लावेरी ॥ इक ताजनि तुरी चंगेरी ॥
घरि की गीहनि चंगी ॥ जनु धंना लेवै मंगी ॥२॥
(पन्ना ६९५)

भक्त धंना जी ने अकाल पुरख वाहिगुरु की प्राप्ति गृहस्थ में विचरते हुए, पारिवारिक एवं सामाजिक जिम्मेदारियां निभाते हुए, भय, श्रद्धा, संतोष, दृढ़ विश्वास, भोलेपन से किरत करते हुए की। उन्होंने सरल साधना के साथ आत्मिक मंडल में चित्त की एकाग्रता तथा प्रभु-प्रेम में लीन होकर आत्मिक ज्ञान का प्रकाश प्राप्त किया। भक्त धंना जी के जीवन के अंतिम समय के बारे में कोई ज्यादा प्रमाणिक सामग्री नहीं मिलती।

पाद-टिप्पणियां :

१. श्री गुरु ग्रंथ कोश, भाई वीर सिंघ जी, पृष्ठ ६८०
२. इतिहास श्री गुरु ग्रंथ साहिब-- भगत बाणी, ज्ञानी गुरदित्त सिंघ, पृष्ठ २८६

प्रार्थना : एक तुम्हारे नाते ही

एक तुम्हारे नाते ही, सारे व्यवहार निभाऊं!
एक तुम्हीं को सारे कर्मों का फल भेंट चढ़ाऊं!
तुमको ही अंदर-बाहर, सर्वत्र देखता जाऊं!
एक तुम्हीं को चाहूँ भगवन! बाकी सब बिसराऊं!
एक तुम्हारा साथ रहे बस, तुमसे ही बतियाऊं!
एक तुम्हीं को मानूं अपना, दुखड़ा सभी सुनाऊं!
एक तुम्हीं में रमा रहे मन, गीत तुम्हारे गाऊं!
एक तुम्हीं में तन्मय होकर, एक तुम्हीं को ध्याऊं!
एक तुम्हीं से सखा-भाव से, झगड़ूं कभी मनाऊं!
एक तुम्हीं से बाल-भाव से, रूठूं या इतराऊं!
दास्य-भाव से भक्ति करूं तो, स्वामी तुम्हें बनाऊं!
और मधुर सौभाग्य मिले तो, तुमको ही सरसाऊं!
एक तुम्हीं पर करूं भरोसा, शरणागत हो जाऊं!
तव इच्छा मम इच्छा हो फिर, भूल स्वयं को जाऊं!

-श्री प्रशांत अग्रवाल, ४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र) मो. ९८११६-०७६७२

गुरमति पंच दूत वसि आवहि

-डॉ. मनजीत कौर*

मानव शरीर पांच तत्वों से निर्मित है। इस पंच भौतिक शारीरिक ढांचे में परमात्मा का अंश 'आत्मा' का निवास है, जैसा कि गुरबाणी प्रमाण है :

पंच ततु मिलि इहु तनु कीआ ॥ (पन्ना १०३९)

अर्थात् हवा, पानी, अग्नि, धरती तथा आकाश के संयोग से यह शरीर बना है तथा इस पंच भौतिक शरीर में पांच जज्बात विद्यमान हैं। अगर इन जज्बातों को सही दिशा-निर्देश न मिले तो ये विकारों का रूप धारण कर लेते हैं। ये पांच विकार हैं : काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार। मानव-जीवन की सार्थकता हेतु इन विकारों पर नियंत्रण अति आवश्यक है। अगर लम्बे समय तक इन पर लगाम न कसी जाए तो ये खूंखार जंगली जानवरों जैसा रूप धारण कर लेते हैं। अत: इन विकारों का विष अंदर ही अंदर गुणों को समाप्त कर अवगुणों को बढ़ा देता है और यही अवगुण असाध्य बीमारी के रूप में परिवर्तित होकर इस अमूल्य जीवन को नरक बना कर बर्बाद कर देते हैं। गुरु नानक पातशाह का इस सन्दर्भ में संदेश है :

अवरि पंच हम एक जना किउ राखउ घर बारु मना ॥
मारहि लूटहि नीत नीत किसु आगै करी पुकार जना ॥ (पन्ना १५५)

भक्त रविदास जी इस संदर्भ में एक बहुत सुंदर दृष्टांत देकर समझाते हैं कि विविध जीव-जंतुओं में एक-एक विकार मौजूद है और वही विकार ही उनकी मौत का कारण बन जाता है। उस इंसान की क्या दशा होगी जिसमें ये पांचों ही विकार विद्यमान हैं, यथा :

म्रिग मीन भ्रिंग पतंग कुंचर एक दोख बिनास ॥
पंच दोख असाध जा महि ता की केतक आस ॥
(पन्ना ४८६)

अर्थात् हिरण को श्रवण रस, मछली को जिह्वा का स्वाद, भंवरे की सूंघने की वृत्ति, पतंगे को देखने का शौंक तथा हाथी को काम-रस। मनुष्य में ये पांचों ही रस (रोग) हों तो उसके बचने की क्या उम्मीद की जा सकती है?

इसी तरह पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी भी जीव को सुचेत कर रहे हैं कि आखिर कौन इन पांच विकारों से बचने में समर्थ हो सकता है?

चारि बरन चउहा के मरदन खटु दरसन कर तली रे ॥
सुंदर सुघर सरूप सिआने पंचहु ही मोहि छली रे ॥
जिनि मिलि मारे पंच सूरबीर ऐसो कउनु बली रे ॥
जिनि पंच मारि बिदारि गुदारे सो पूरा इह कली रे ॥ (पन्ना ४०४)

बहुत ही सूझवान कहलवाने वाले भी इन पांच विकारों की गिरफ्त से मुक्त नहीं हैं।

गुरबाणी का पावन फरमान है कि यह सारा दृश्यमान जगत उस परमेश्वर की ही

*२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर (राजस्थान)-३०२००४, फोन ०१४१-२६५०३७०

रचना है या यूं कहें कि उसी का ही शारीरिक ढांचा है। इसकी रचना करके वह जर्रे-जर्रे में एकरस व्यापक है। कोई जीव, कोई प्रकृति का कण उस ईश्वर के बिना नहीं है :

इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वासु ॥ *(पन्ना ४६३)*

लेकिन जीव के विकारों का पर्दा इतना प्रबल हो गया है कि उस ईश्वर की विद्यमानता दृष्टिगत नहीं होती। ठीक वैसे ही जैसे लकड़ी में अग्नि है परन्तु दिखाई नहीं देती, दूध में घी है पर दिखाई नहीं देता, वैसे ही वह ईश्वर जर्रे-जर्रे में समाया हुआ है, परंतु विकारों के पर्दे के कारण दिखाई नहीं देता। पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी का पवान शबद है :

सगल बनसपति महि बैसंतरु सगल दूध महि घीआ ॥
ऊच नीच महि जोति समाणी घटि घटि माधउ जीआ ॥ *(पन्ना ६१७)*

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या इन विकारों रूपी विष से बचना मुमकिन है? चिंतकों के मतानुसार इनसे पूर्णतया मुक्ति तो सम्भव नहीं है लेकिन गुरबाणी आशयानुसार जीवन बना कर इन पांच विकारों पर विजय पाई जा सकती है। गुरबाणी का पावन संदेश है :

अवर जोनि तेरी पनिहारी ॥
इसु धरती महि तेरी सिकदारी ॥ (पन्ना ३७४)

अगर बाकी सब योनियां तेरी खिदमत (सेवा) में हाजिर हैं, अगर इंसान स्वयं ही इन पांच विकारों का गुलाम है तो इसकी हकूमत किस पर चलेगी? वस्तुत: ये विकार जन्म-जन्मांतरों से जीव के अंदर संस्कार रूप में इस तरह बस गए हैं कि इंसान इन्हें अपना मित्र-बंधु समझने लगा है और इनसे इसकी प्रीति पड़ गई है। फिर कोई अपने प्रिय मीत-बंधु को अपने से दूर करने की कोशिश क्यों करेगा?

भक्त कबीर जी के समय की एक घटना है—जैसा कि संत-महापुरुषों का तो धर्म ही यही होता है कि दूसरों को सतसंग के लिए, ईश्वर-भक्ति के लिए प्रेरित करना। भक्त कबीर जी एक सेठ को हर रोज कहते कि सतसंग में आया करो, ईश्वर का सिमरन कर अपना जीवन सफल करो। एक दिन वह सेठ भक्त कबीर जी के पास पहुंचा और विनती की कि आज मैं दुकान बंद करके आपके पास आया हूं, न जाने कितने ग्राहक वापस चले जायेंगे! अब कृप्या जल्दी से मुझे नाम-दान दे दो। भक्त कबीर जी ने उसकी मनोस्थिति को समझते हुए कहा कि ऐसे लोगों के लिए प्रभु-नाम की क्या कीमत है? उसे कहा कि आप हमारे लिए एक लोटा दूध ले आओ और मैं तुम्हें प्रभु-नाम दे दूंगा। सेठ बहुत खुश हुआ। शीघ्रता से अपने घर गया। एक लोटा दूध लेकर भक्त कबीर जी के समक्ष आ खड़ा हुआ। भक्त कबीर जी ने अपना एक जूठन वाला अस्वच्छ-सा बर्तन आगे बढ़ा दिया। सेठ जी ने झट अपना दूध वाला बर्तन पीछे हटा लिया। भक्त कबीर जी बोले, "क्या हुआ, दूध डालते क्यों नहीं?" सेठ बोला, "इस बर्तन में डालने से तो दूध खराब हो जाएगा!" भक्त कबीर जी मुस्करा कर बोले कि यदि तू अपना दो टके का दूध इस मैले बर्तन में नहीं डाल सकता तो मैं तेरे इस जन्म-जन्मांतरों से मैले हुए हृदय में नाम कैसे डाल दूं? गुरबाणी का प्रमाण है :

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु ॥ *(पन्ना ६५१)*

कहने का अभिप्राय, इन विकारों की मैल

को तो केवल नाम ही निर्मल कर सकता है। सेवा से पहले इस हृदय रूपी बर्तन को पवित्र करना है तभी इसमें नाम रूपी अमृत समा सकेगा, जैसा कि जपु जी साहिब में श्री गुरु नानक देव जी का पावन संदेश है :

भरीऐ हथु पैरु तनु देह ॥
पाणी धोतै उतरसु खेह ॥
मूत पलीती कपड़ु होइ ॥
दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ ॥
भरीऐ मति पापा कै संगि ॥
ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥ *(पन्ना ४)*

रोजमर्रा का उदाहरण देकर गुरदेव ने कलयुगी जीवों को एक गूढ़ रहस्य समझाया है कि किसी प्रकार शरीर का कोई अंग मिट्टी-धूल आदि से भर जाए तो पानी से धोने पर वह मैल उतर जायेगी, वस्त्र आदि मैला हो जाए तो साबुन आदि से धोने से साफ हो जायेगा, लेकिन अगर मनुष्य की बुद्धि पापों (विकारों) की मैल से भर जाये तो वह पानी या किसी भी साबुन आदि से उज्जवल नहीं हो सकती। वह तो केवल उस ईश्वर की सिफत-सलाह, उसके सिमरन से ही उज्जवल या पवित्र हो सकती है। यही नहीं, गुरु पातशाह आगे कलयुगी जीवों का एक बहुत बड़ा भ्रम दूर करते हैं। इन्सानी फितरत यह है कि हम अक्सर सोचते हैं : *"एह जग मिट्ठा, अगला किन डिट्ठा?"* अर्थात् आगे किसने देखा है! अभी ही मौज-मस्ती कर लो! गुरबाणी का फरमान है:

पुंनी पापी आखणु नाहि ॥
करि करि करणा लिखि लै जाहु ॥
आपे बीजि आपे ही खाहु ॥
नानक हुकमी आवहु जाहु ॥ *(पन्ना ४)*

अर्थात् ये पुण्य और पाप-कर्म कहने मात्र के लिए नहीं बने। अपने कर्मों रूपी संस्कारों को तू अपने साथ लेकर जायेगा और फिर उस मालिक की दरगाह पर उन कर्मों का लेखा-जोखा होगा और उसके कठोर फल तुझे भुगतने ही पड़ेंगे, जैसे कि आम प्रचलित कहावत है : "बोए पेड़ बबूल के आम कहां से होए?" इस संदर्भ में गुरबाणी का पावन आदेश है :

जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥
नानक प्रभ सरणागती चरण बोहिथ प्रभ देतु ॥
से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखण वाला हेतु ॥ *(पन्ना १३४)*

अर्थात् यह शरीर मनुष्य के लिए कर्मों का खेत है। जो कुछ मनुष्य इस (खेत) में बोता है वही फसल काटता है, जैसे कर्म करता है वैसा ही फल प्राप्त करता है।

वस्तुतः विष बोकर अमृत की अभिलाषा रखने वालों को गुरबाणी का संदेश स्मरण रखना चाहिए :

कपड़ु रूपु सुहावणा छडि दुनीआ अंदरि जावणा ॥
मंदा चंगा आपणा आपे ही कीता पावणा ॥
(पन्ना ४७०)

अतः चिंतकों के चिन्तनानुसार प्रत्येक वह कर्म जिसके साथ हमारा हृदय जुड़ा होता है, उस कर्म का संस्कार बनता है और बार-बार उन्हीं कर्मों को दोहराते रहने से संस्कार स्वभाव में परिवर्तित हो जाते हैं। ये विकार हमारे हृदय-घर में कर्म से संस्कार में परिवर्तित होकर हमारा स्वभाव न बन जाएं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी से दिशा-निर्देश लेकर अपना जीवन रूपान्तरित करने का प्रयास करें। इन विकारों पर विजय प्राप्त कर हम सही जीवन-जाच सीख कर अपना यह अमूल्य जीवन

सार्थक कर सकते हैं। इस प्रकार विषय-विकारों को जीता जा सकता है :-

१. काम को संयम से

२. क्रोध को शूरवीरता से

३. लोभ को संतोष से

४. मोह को प्रेम से

५. अहंकार को विनम्रता से

'काम' अर्थात् भोग-विलास की बढ़ी हुई इच्छा। पंचम पातशाह ने तो इसे नरक का भागी बनाने वाला कहा है, जो कि मनुष्यों को योनियों में भटकाता है। दिल को मोह लेने वाले काम की तीनों लोकों में पहुंच है। 'काम' जप, तप तथा शील का नाश कर देता है। 'काम' अनियंत्रित तथा चंचल स्वभाव बनाने वाला है। 'काम' छोटे-बड़े सबको एक-सा दुख देने वाला है। 'काम' के भय को साधसंगत तथा ईश्वर का सहारा लेकर ही दूर किया जा सकता है, यथा:

हे कामं नरक बिस्रामं बहु जोनी भ्रमावणह ॥
चित हरणं त्रै लोक गंम्यं जप तप सील बिदारणह ॥
अलप सुख अवित चंचल ऊच नीच समावणह ॥
तव भै बिमुंचित साध संगम ओट नानक नाराइणह ॥ *(पन्ना १३५८)*

भक्त कबीर जी ने 'काम' की तुलना चोर से की है, जो ज्ञान रूपी रत्न को चुरा लेता है, यथा :

इसु तन मन मधे मदन चोर ॥
जिनि गिआन रतनु हिरि लीन मोर ॥
(पन्ना ११९४)

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या 'काम' को मारा जा सकता है? उत्तर स्पष्ट है, 'नहीं'। क्योंकि जब तक शरीर कायम है, काम, क्रोध, आदि विकार उसमें रहेंगे ही। बहुत से तपस्वी एवं ऋषियों ने एकांतवास द्वारा तथा आक-धतूरा आदि खाकर इसको मारने का प्रयास किया है, परन्तु उन्हें भी पूर्णतः सफलता नहीं मिली। सिख धर्म में जज्बातों को मारने पर बल नहीं दिया अपितु इन्हें नियन्त्रित रखने तथा सही प्रयोग करने की शिक्षा दी गई है। यदि एक रथ के घोड़ों को मार दिया जाये या घोड़ों को कमजोर कर दिया जाये तो वह रथ किसी लक्ष्य पर नहीं पहुंच सकता। मारने के स्थान पर उन्हें नियंत्रण में करने की आवश्यकता है। *('सिख धर्म फिलासफी', उद्धृत पृ. ४६ से साभार)*

अतः काम के संशोधित रूप हेतु सिख धर्म में गृहस्थ धर्म अपनाने का प्रावधान है तथा जहां स्त्री को पतिव्रता होने का संदेश है वहीं पुरुष के लिए *"एका नारी जती होइ पर नारी धी भैण बखाणै"* का संदेश है। यही नहीं दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने खालसा पंथ की सृजना के उपरांत खालसा के लिए पर-नारी या पर-पुरुष-गमन को मुख्य कुरहित में शामिल कर अपने सिखों को उपदेश दिया :

पर बेटी को बेटी जानै ॥
पर इसतरी को मात बखानै ॥
अपनी इसतरी सों रत होई ॥
रहतवान गुर का सिख सोई ॥
(रहितनामा, भाई देसा सिंघ जी)

चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी ने मनुष्य के शरीर को एक शहर माना है जो काम-क्रोध आदि विषय-विकारों से भरा पड़ा है तथा इससे बचने का एक ही उपाय है—ईश्वर के प्रेम में जुड़े हुए संत-जनों की संगत पाना, यथा :

कामि करोधि नगरु बहु भरिआ
मिलि साधू खंडल खंडा हे ॥

पूरबि लिखत लिखे गुरु पाइआ
मनि हरि लिव मंडल मंडा हे ॥ (पन्ना १३)

जिस मनुष्य को पूर्व के कर्मों के संयोग से पूर्ण गुरु मिल जाता है उसकी ईश्वर के चरणों में लिव जुड़ जाती है, जिसके फलस्वरूप इस शरीर रूपी शहर में कामादिक विकारों का जोर नहीं रहता।

जब तक मनुष्य के मन में यह दृढ़ विश्वास नहीं बन जाता कि वह ईश्वर हमारी प्रत्येक चितवनी और करनी को देख रहा है और उन्हीं कर्मों के अनुसार हमें फल भी भोगना पड़ेगा तब तक इंसान इसी भ्रम में निरंतर पाप-कर्म करता रहता है, यथा :

देइ किवाड़ अनिक पड़दे महि पर दारा संगि फाकै ॥
चित्र गुपतु जब लेखा मागहि तब कउणु पड़दा तेरा ढाकै ॥ (पन्ना ६१६)

यदि सब तरह के विकारों से बचना चाहता है तो शबद रूपी अंकुश से मन रूपी हाथी वश में करना सीख, जैसा कि गुरबाणी का पावन निर्देश है :

मन गुरमति चाल चलावैगो ॥
जिउ मैगलु मसतु दीजै तलि कुंडे गुर अंकसु सबदु द्रिड़ावैगो ॥ (पन्ना १३१०)

यही नहीं नाम जपने से ईश्वर से प्रीति बनती है, शुभ कर्मों के प्रति उत्साह बना रहता है और इंसान सहज भाव ही इन विकारों से बच जाता है, यथा :

गुरमति पंच दूत वसि आवहि
मनि तनि हरि ओमाहा राम ॥
नामु रतनु हरि नामु जपाहा ॥
हरि गुण गाइ सदा लै लाहा ॥
दीन दइआल क्रिपा करि माधो
हरि हरि नामु ओमाहा राम ॥ (पन्ना ६९९)

अर्थात् गुरु की शिक्षा लेने से काम आदि पांचों वैरी वश में आ जाते हैं। हरि का नाम जप कर ही सदा कायम रहने वाला धन प्राप्त किया जा सकता है। हे दया के सागर प्रभु! रहमत कर, हमारे मन में तेरा नाम जपने का चाव बना रहे।

भक्त नामदेव जी तो यहां तक स्पष्ट कर देते हैं कि जो व्यक्ति पर-धन या पर-नारी का त्याग कर देता है उसे प्रभु-मिलन होने में देरी नहीं लगती।

अतः संयमी जीवन व्यतीत करते हुए, गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए गुरबाणी चिंतन, मनन अभ्यास, सतसंग, सादा जीवन, उच्च विचार से ये विकार आदि अपना प्रभाव डालने में असमर्थ रहते हैं। अतः स्पष्ट है कि संयमी जीवन द्वारा काम रूपी विकार पर विजय पाई जा सकती है। पंचम पातशाह का पावन फरमान है :

कामु क्रोधु लोभु मोहु निवारे निवरे सगल बैराई ॥
सद हजूरि हाजरु है नाजरु कतहि न भइओ दूराई ॥ (पन्ना १०००)

आवश्यकता है केवल गुरबाणी की रहनुमाई में जीवन ढालने की, तभी इन विकारों पर विजय पाना मुमकिन हो सकेगा। ❁

दसतार

*-सिमरजीत सिंघ**

केशधारी रहना प्राचीन काल से नेक एवं महान व्यक्तियों की मर्यादा रही है। केशों की संभाल करने के लिए दसतारों (पगड़ी) के नये-नये रूप धारकर, सर पर सजाकर हर व्यक्ति गर्व महसूस करता आया है। पूरी दुनिया में अपने सर को किसी-न-किसी रूप में ढककर रखने की महत्ता रही है। अरब एवं अफ़गान देशों में बहुत-से लोग अगर पगड़ी नहीं बांधते तो भी अपने सर को एक कपड़े से ढककर अवश्य रखते हैं। एमरास, बहरीन, फलसतीन, सारजा, दुबई आदि अमीरज़ादे अपने सरों पर किसी न किसी रूप में पगड़ी जरूर सजाते रहे हैं। तुर्की, सीरिया, मिस्र आदि देशों में पगड़ी का बहुत सत्कार था। अमीर घरानों में सोने से पहले पगड़ी को किसी विशेष कुर्सी पर रखा जाता था और शादियों में लड़कियों को तोहफे के रूप में अन्य फर्नीचर के साथ यह कुर्सी भी दी जाती थी। इस कुर्सी पर नव-ब्याहे दूल्हा-दुल्हन अपने सर के वस्त्रों के अलावा और कुछ नहीं रखते थे। इसलाम धर्म के ग्रंथों में यहां तक लिखा गया है कि जब स्वर्ग में से बाबा आदम को निकाला गया और इसको धरती पर भेजा गया तो उस समय उसने पगड़ी बांधी हुई थी जो कि जबराइल ने उसके सर पर सजायी थी।

भारत में पगड़ी बंधने का रिवाज़ कब शुरू हुआ इसके बारे में चाहे निश्चित रूप में कोई प्रमाण नहीं मिलता परंतु संस्कृत भाषा में 'उष्णीष' शब्द मिलता है जिसका अर्थ है सिर को ऊष्ण (गर्मी) से बचाने वाला पहरावा; पगड़ी, साफा, मुकुट आदि, जो रामायण या महाभारत के समय क्षत्रिय कहलाने वाले राजा, महाराजा व सरदार पहनते थे। आर्य लोगों ने दसतार का पहरावा, जो भारत के निवासियों, द्राविड़ों या असीरियों तथा बिबोलियन के लोगों में ईसा से तीन-चार हज़ार साल पहले प्रचलित था, आदिवासियों से ही लिया था। आर्य लोग, जो मध्य एशिया में से आकर आबाद हुए थे, जब भारत में आए तो उस समय इनके पास शरीर को ढकने के लिए दो ही कपड़े हुआ करते थे-- उरहीय (साफा) तथा अंत्रीय (धोती)।

भारत में दसतार सजाने का रिवाज़ बहुत पुराना है। इसकी गवाही अजंता एवं अलोरा की गुफाएं भी भरती हैं। विद्वानों के अनुसार दसतार का मूल यहूदियों व अरबियों से चलता है। ईसाई धर्म की पुस्तक 'बाइबिल' में भी पगड़ी बांधने का ज़िक्र मिलता है जिससे मालूम पड़ता है कि ईसा से १३०० साल पहले यहूदी तथा ईसाई लोग पगड़ी बांधते थे। बपतिसमे की रसम राज्य-गद्दी तथा अन्य ऐसी रस्मों के समय पगड़ी बांधना आवश्यक था। बाइबिल में ज़िक्र है कि बिबोलियन के युवकों की दाढ़ियां एवं पगड़ी के साथ सजी शख़्सियतों के दीवार-चित्र जब दूर बैठी स्त्रियों ने देखे तो वे मन्त्रमुग्ध हो गयीं। यूरोपी तथा अमेरिकी स्त्रियां-मर्द टोपियों के इर्द-गिर्द छोटी पट्टी या फीते लपेटते हैं जिसकी पृष्ठभूमि दसतार ही है। विग, जो अदालतों के जज या दानशवर आज तक प्रयोग करते हैं, दसतार का ही प्रतीक हैं।

**संपादक, गुरमति ज्ञान/गुरमति प्रकाश*

अंग्रेजी का शब्द 'टरबन' फारसी भाषा के शब्द 'दुलबंद' से निकला माना जाता है, जबकि 'दुलबंद' तुर्की भाषा के शब्द 'टरबश' से उत्पन्न हुआ है। टरबश एक लम्बे स्कार्फ़ को कहा जाता है जो सर के गिर्द लपेटा जाता है। दसतार के लिए फारसी शब्द 'सरबंद' का प्रयोग किया जाता है। प्राचीन मिस्र की सभ्यता के अनुसार सर पर सजावटी लिबास के लिए दसतार अति आवश्यक है तथा इसको 'पजर' कहा जाता था। हो सकता है हिंदी-पंजाबी का शब्द पगड़ी या पग्ग 'पजर' से ही बना हो।

एक ऐतिहासिक घटना का ज़िक्र भाई संतोख सिंघ ने 'गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' में किया है कि पांडव राज्य के बहुत समय बाद भारत में नंद नामक खानदान के राजे राज्य करते थे। एक नंद राजा विशेष प्रताप का मालिक था। उसने छोटे-मोटे राजाओं को जीतकर उनको देश-निकाला दे दिया। वह राजा मन ही मन बहुत डरता भी था कि कहीं ये राजे उसके राज्य को नष्ट न कर दें। उस नंद राजा ने अपने वज़ीरों के साथ सलाह-मश्विरा किया कि इनकी ताकत को किस तरह से नष्ट किया जाए? अत: सभी ने सलाह दी कि इन राजाओं के केश कत्ल कर दिए जाएं :

दिजबर बिदिया जितक प्रबीना।
सभ को कीजहि केस बहीना।
शूद्र छाप अपनी दिहु लाइ।
मूंडे सीस मंत्र निहफलाइ।
बरनी सिध ने किस की होइ।
अनक उपाइ करे जे कोइ।

सब विद्वानों को कैद करके उनके केश व दाढ़ियां जबरदस्ती मुंडवा दी गयीं। एक समय था जब केश कत्ल करना भारी सज़ा समझी जाती थी। इसके प्रमाण भी मिलते हैं कि रुकमणि के निवेदन करने पर उसके भाई रुकमण का सर काटने की बजाय श्री कृष्ण जी ने उसके केश काट दिए थे।

सिक्ख धर्म में दसतार के सत्कार की कहानी सिक्ख धर्म जितनी ही पुरानी है। सिक्ख धर्म के संस्थापक श्री गुरु नानक देव जी केशों का सत्कार करते हुए दसतार सजाते थे। इसके बारे में कवि संतोख सिंघ चूड़ामणि ने 'नानक प्रकाश' में ज़िक्र किया है कि :

जल लोचन कंज बिसाल भले सिर पै उषनीकहि नीक बन्हाई।
चटसार जहां अति चारु बनी बहु बारिक बारहि बार अलाई।

अर्थात् जब श्री गुरु नानक देव जी को उनके पिता महिता कालू जी पांधे के पास चटसाल में लेकर गए तो उस समय श्री गुरु नानक देव जी ने सिर पर सुंदर दसतार सजायी हुई थी। श्री गुरु नानक देव जी जब पूर्व दिशा में अपनी प्रचार-फेरी पर गए तो बिशंभरपुर नगर में उनका मिलाप सालस राय जौहरी से हुआ। उसकी प्रेमा-भक्ति को देखकर गुरु जी ने उसको अकाल पुरख का सेवक जानकर दसतार बख़्शिश की तथा सिक्खी का प्रचारक नियुक्त किया।

श्री गुरु अमरदास जी को गुरु-घर से हर साल दसतार रूपी सिरोपाउ बख़्शिश होता रहा। मिस्र में भी यह रिवाज़ आम प्रचलित था कि किसी करीबी के मरने पर सोग के रूप में सिर से दसतार उतार दी जाती थी। पंजाब में भी यह रिवाज़ प्रचलित रहा है। इसका ज़िक्र भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में भी किया है :

ठंढे खूहहुं न्हाइ कै पग विसारि आइआ सिरि नंगै।
घर विचि रंनां कमलीआं धुसी लीती देखि कुढंगै।
(वार ३२:१९)

श्री गुरु अरजन देव जी के समकालीन विद्वान मोहसिन फानी ने अपनी पुस्तक 'दबिस्तान

मज़ाहब' में ज़िक्र किया है कि वैसाखी वाले दिन मसंद गुरु-दरबार में आकर इकट्ठा होते हैं। जो भी मेली गुरु-दर्शन की इच्छा प्रकट करता है ये मसंद साथ लेकर आते हैं। जब मसंद गुरु जी से विदायगी लेते हैं तो इनको दसतार सम्मान के रूप में बख़्शिश की जाती है :

दर हंगामे रुखसत हर कदामें,
अज़ मसंदा रा गुरू दसतार-इ-अनाइत कुनंद।

छठम पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने दसतार की महानता को समझते हुए दोहरी दसतार सजायी जिसकी सुंदरता एवं जाहो-जलाल का ज़िक्र समकालीन कवियों ने अपनी रचनायों में किया है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के दरबारी ढाडी भाई अब्दुल्ला जी तथा भाई नत्थ मल्ल जी ने उनकी दसतार की शोभा बयान करते हुए वर्णन किया है :

दो तलवारां बद्धीआं, इक मीरी दी, इक पीरी दी।
इक अज़मत दी, इक राज दी, इक राखी करे वज़ीर दी। . . .
पग्ग तेरी, की जहांगीर दी?

भारत में अनेकों हमलावरों ने आकर हमला किया। ये हमलावर हमेशा अपनी दसतारों को तो हीरे-मोतियों से शृंगारते परंतु गुलामों को केश कत्ल करने के लिए मज़बूर करते, ताकि वे दसतार न सजा सकें, जिस कारण हमारे अमूल्य विरसे को भारी चोट लगती रही। अफ़गानियों ने भारत में अपने-आप को सर्वश्रेष्ठ दर्शाने के लिए सारे भारत में हिंदुओं के पगड़ी बांधने पर पाबंदी लगा दी। १७वीं सदी में कश्मीर के हिंदू मुसाहिब को अपने लड़के के विवाह पर एक सौ एक गज़ लंबी पगड़ी बांधने की इजाज़त लेनी पड़ी।

दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने १७५६ बिक्रमी की वैसाखी वाले दिन सिक्खों को विलक्षण पहचान दी। दसतार को सिक्खों का आवश्यक अंग बनाकर इनको सदा-सदा के लिए सरदारियां बख़्श दीं तथा दसतार सम्बंधी रहितें भी लागू कीं, जिनके बारे में बहुत सारे विद्वानों ने अपनी रचनायों में ज़िक्र किया है।

भाई देसा सिंघ जी ने 'रहितनामे' में दसतार सम्बंधी ज़िक्र किया है :

प्रात इशनान जतन जो साधे।
कंघा करद दसतारहि बांधे।
चार घड़ी जब दिवस रहाई।
पंच इशनाना पुनह कराई।
कंघा करद दसतार सजावे।
इही रहत सिंघन सो भावै।

भाई दया सिंघ जी ने 'रहितनामे' में लिखा है :

- जूड़ा सीस के मद्ध भाग में राखै, और पाग बड़ी बांधे।
- कंघा द्वै काल करे पाग चुनकि बांधे।
- पग्ग उतारि के प्रसाद जो पावे,
नगन होइ जो नावहि, कुंभी नरक भोगै।
- जिस की लड़ाई में पग्ग उतरै सो टका,
पक्का तनखाह, जो उतारे दो टके पक्का।
- गुर का सिक्ख पग्ग लत्थे दी संगत ना करे।

ज्ञानी गिआन सिंघ 'पंथ प्रकाश' में ज़िक्र करते हुए लिखते हैं :

सवा पहिर निश करे शनान, बाणी पढ़ै खड़ पग्ग बधान।

भाई नंद लाल जी अपनी रचना 'तनखाहनामे' में ज़िक्र करते हुए लिखते हैं :

- कंघा दोनउं वकत कर, पाग चुनहि कर बांधई।
- नगन होइ बाहर फिरहि, नगन सीस जो खाइ।
- नगन प्रसादि जो बांटई, तनखाही बडो कहाइ।

भाई चउपा सिंघ जी के अनुसार :

- पग्ग राती लाहि के सवें, सो भी तनखाहीआ।
नंगे केसीं फिरे, रवाल पाए, सो भी तनखाहीआ।
नंगे केसीं मारग टुरे, सो तनखाहीआ।

नंगे केसीं भोजन करे सो तनखाहीआ।
पगड़ी लाहि कर सिक्ख प्रसादि खाए, सो तनखाहीआ।
– शसतरधारी सिंघ राति को ऐकड़ न सवै।
लक्कों सिरों नंगा न होइ।
पगड़ी तकड़ी बंन्है।
– जो सिक्ख, सिक्ख दी पग्ग नूं हत्थ पाए, सो भी तनखाहीआ।
– जो पग्ग नूं बासी रखे सो तनखाहीआ।
– जो केसाधारी लक्क का पड़दा सिर ते धरे, सो भी तनखाहीआ।
– जो केसधारी टोपी रखै, सो भी तनखाहीआ।

भाई प्रहिलाद सिंघ जी रहितनामे में लिखते हैं :

– पाग उतारि प्रसादि जो खावे, सो सिक्ख कुंभी नरक सिधावे।
– टोपी वाले दा जूठा खाए, सो तनखाहीआ।
– होइ सिक्ख सिर टोपी धरै, सात जनम कुशटी होइ मरै।
टोपी देखि निवावहि सीस। सो सिक्ख नरकी बिस्वै बीस।

'पंजाब में जन्मे हुए लोगों को रोज नई मुहिम पर रहना पड़ता हैं वाली कहावत में स्पष्ट रूप से सिक्खों का उल्लेख न होने के बावजूद भी इस कहावत का गुरु के नाम-लेवा सिक्खों अर्थात् श्री गुरु नानक देव जी द्वारा स्थापित सिक्ख पंथ तथा इस पंथ में से साहिब-ए-कमाल दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा साजे-निवाजे खालसा पंथ के साथ बड़ा गहरा सम्बंध है। दसतार सम्बंधी सिक्खों का संघर्ष १६वीं शताब्दी से शुरू हो गया था जो निरंतर जारी है। सबसे पहले सिक्खों का यह संघर्ष मुगल राज्य के साथ था क्योंकि मुगल राज्य में दसतार सजाने का अधिकार केवल मुसलमानों को ही था। उनका विचार था कि पगड़ी बांधने का अधिकार केवल राज्य करने वाली कौम को ही होता है। सिक्ख गुरु साहिबान ने उनकी इस धक्केशाही का डटकर विरोध किया जिसके कारण मुगलों के गुस्से का शिकार होना पड़ा।

मौलवी बूटे शाह अपनी लिखित 'तवारीख-ए-पंजाब' में लिखता है कि जब कभी सिक्खों ने दुश्मनों के काफिलों पर हमला बोला तो उन्होंने अपने दुश्मनों के सरों पर सजाई दसतारों हाथ नहीं लगाया और न ही उनका अपमान किया है। उन्होंने इसी तरह स्त्रियों के दुपट्टों व गहनों को भी हाथ नहीं लगाया। इससे जाहिर है कि सिक्ख दसतार का बहुत ज्यादा सत्कार करते थे, वो चाहे अपनी हो या दुश्मन की।

सिक्ख पंथ ने ही हिदोस्तान की सदियों से गुलामी के क्रूर चक्कर में फंसी जनता को राजनीतिक, सभ्याचारक, मानसिक व आत्मिक आज़ादी की राह दिखाई। स्वाभिमान की प्रतीक कौम की उतर चुकी दसतार को पुन: इसके सर सजाने की कोशिश आरंभ की गई। विदेशी हमलावर हाकिमों द्वारा हिंदोस्तानी कौम की पगड़ी को पांवों में रौंदना अपना जन्म-सिद्ध अधिकार समझा जाता था। हालत यहां तक पहुंच चुकी थी कि हिंदोस्तानी न केश-दाढ़ी रख सकते थे और न ही सर पर दसतार सजा सकते थे। उनको घुड़सवारी करना भी मना था। इसी तरह विदेशी मूल के हाकिमों-हमलावरों ने सारे बुनियादी हक हिंदोस्तानी कौम से छीन लिए थे। सिक्ख गुरु साहिबान की अगुआई में सजे सिक्ख पंथ ने सर पर दसतार सजाने का साहस किया। इसने हिंदोस्तान की सारी जनता से छीने हकों की पुन: स्थापना के लिए सिरतोड़ यत्न आरंभ किए। इन यत्नों के प्रसंग में ही सिक्ख पंथ को उत्तर गुरु-काल में घल्लूघारों में से गुज़रना पड़ा। अठारहवीं सदी में मुगल हाकिमों द्वारा काहनूंवान के छंभ में छोटा घल्लूघारा घटित हुआ। इसी सदी में मलेरकोटला के

पास कुप्प रोहीड़े के मुकाम पर अफ़गान हमलावर अहमद शाह अब्दाली द्वारा ५ फरवरी, १७६२ ई को बड़ा घल्लूघारा घटित हुआ।

अत्याचार पहले से कई गुना बढ़ गए, परंतु सिक्ख गुरु साहिबान तथा उनके नाम-लेवा सिक्खों को किसी भी सूरत-ए-हाल में जुल्म-जब्र ढाने वालों के साथ समझौता करना प्रवान नहीं हो सका था। इसी पक्ष ने सिक्खों को ज्यादा से ज्यादा कुर्बानियां करने के रास्ते पर चलाया। सिक्खों ने बेमिसाल कुर्बानियां दीं तथा कौमी गर्व व स्वाभिमान से इसके चिन्ह दसतार को ऊंचा करके रखा। सिक्खों को 'सरदार' कहकर संबोधित किया जाता है। 'सरदार' से अभिप्राय है 'सिरदार' अर्थात् साबत सूरत केशों सहित सिर वाला। साबत सूरत केशों सहित दसतार वाला सिक्ख जन्म से ही 'सरदार' है, इसमें किसी तरह की ढील कबूल नहीं है।

अब्दाली को दसतारधारी सिक्ख सरदार चुभते थे, क्योंकि सिक्ख जत्थे उसके द्वारा गज़नी के बाज़ारों में बेचने हेतु ले जाई जा रही बंदी बनायी स्त्रियों को छुड़ाकर उनके घर पहुंचाने की हिम्मत करते थे तथा उनके लूटे माल को छीनने की सामर्थ्य अकाल पुरख की कृपा-बख़्शिश का सदका रखते थे। सिक्ख सरदार तो कौम की खोई हुई आन-शान की बहाली करने का प्रयत्न कर रहे थे। दूसरी तरफ आकल दास जैसे टुक्कड़बोच लोग थे जो अब्दाली जैसे अफ़गान हमलावरों को सिक्खों की नसलकुशी करने के लिए संदेश व सूचनाएं दे रहे थे। स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया, स. जस्सा सिंघ रामगढ़िया और स. चढ़त सिंघ, स. बघेल सिंघ, स. तारा सिंघ घेबा (कंग) जैसे सिंघ सरदारों ने फरवरी, १७६२ ई में अब्दाली द्वारा घटित किए गए घल्लूघारे में सिक्ख स्त्रियों तथा बच्चों को रक्षा-सुरक्षा कवच देने हेतु बहुत बड़े प्रयत्न किए, किंतु फिर भी सिक्ख पंथ का बहुत बड़ा जानी नुकसान इस घल्लूघारे में हुआ।

अब्दाली ने अपनी तरफ से तो इस घल्लूघारे में सिक्ख कौम का सर्वनाश ही कर दिया था परंतु 'जा को राखे सांईआं मार सके ना कोइ।' अकाल पुरख की महान इच्छा से देश-कौम की इज़्जत बहाल करने के लिए अस्तित्व में आई इस कौम को खत्म करना अकाल पुरख को खुद मंजूर नहीं था। अब्दाली को अपने गुप्तचरों से पता चला कि बाबा आला सिंघ पटियाला वाले ने रस्द के गड्डे भेजकर सिक्खों की मदद की है। गुस्से में आए अहमद शाह अब्दाली ने बाबा आला सिंघ को कैद कर लिया और उसके केस कत्ल कर देने की सज़ा सुना दी। बाबा आला सिंघ ने सरकारी रीति के अनुसार अपने केशों का कत्ल न करवाने के बदले कीमत देने की अपील की। नियत हाकिम ने बाबा आला सिंघ के केशों का मूल्य सवा लाख रुपये लगाया। बाबा आला सिंघ ने अपने केशों का मूल्य सवा लाख रुपये दे दिया, किंतु केशों को हाथ नहीं लगाने दिया तथा दसतार का सत्कार कायम रखा।

इतिहास साक्षी है कि इस घल्लूघारे के कुछ ही वर्षों के बाद सिक्खों ने अब्दाली का न केवल हिंदोस्तान में दाख़िला पक्के रूप में रोक दिया बल्कि स. चढ़त सिंघ के पोते महाबली महाराजा रणजीत सिंघ ने अफ़गानों को हमलों का मज़ा भी चखाया। इस प्रकार सही अर्थों में देश-कौम की सदियों से उतरी दसतार पूरी आन-शान के साथ बहाल हुई। यह भी स्मर्ण रहे कि महाराजा रणजीत सिंघ ने जो खालसाई राज्य स्थापित किया उसमें हिंदू, सिक्ख, मुसलमान सभी सुखी व खुशहाल बसते रहे, किसी के साथ भी मज़हब के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जाता रहा। महाराजा के जीते-जी अंग्रेजी साम्राज्य भी खालसाई राज्य की ओर टेढ़ी आंख से नहीं देख सका था,

चाहे यह पंजाब को हड़पने के मंद इरादे मन ही मन पाल रहा था।

महाराजा के परलोक गमन के बाद चालाक अंग्रेजों द्वारा डोगरों व पूरबियों को खरीदकर ही इस लोक-कल्याणकारी राज्य को छीना गया। स्वाभिमान की प्रतीक दसतार आन-शान से सजाने वाले सिक्ख अंग्रेजों की गुलामी की जंज़ीरों को काटने के लिए पुनः प्रयत्नशील हो गए। कुछ लहरें, जैसा नामधारी लहर, बब्बर अकाली लहर, गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर, प्रेमा साजिश केस, लाहौर साजिश केस आदि तो निरोल सिक्ख पंथ के साथ ही सम्बंधित लहरों के रूप में प्रकट हुईं जबकि देश की आज़ादी के लिए कौमी संघर्ष में भी सिक्खों ने बढ़-चढ़कर योगदान डाला जिस सम्बंधी आंकड़े समय-समय पर अख़बारों तथा पुस्तकों में छपते रहते हैं।

भारतीय फौज की सिक्ख रेजिमेंट ने सन् १९४७ ई से पहले एवं दूसरे विश्व-युद्ध के अलावा ५० से ज्यादा जंगों में अपनी शूरवीरता के जौहर दिखाए। सिक्ख रेजिमेंट की बटालियन ३६ सिक्ख रेजिमेंट के २२ सिक्ख शूरवीरों ने १०,००० की कबाइली फौज का सारागढ़ी के स्थान पर मुकाबला करके जो आश्चर्यजनक कारनामे किए वे विश्व भर में प्रसिद्ध हैं। अगस्त, १८९७ ई अरकज़ई तथा अफरीदी कबाइलियों ने गुलिस्तान पोस्ट पर हमला कर दिया। १२ सितंबर, १८९७ ई तक १०,००० से ज्यादा कबाइली इक्टठा हो गए। इन्होंने सारागढ़ी की पोस्ट पर हमला कर दिया। सारागढ़ी की चौंकी में उस समय केवल २२ दसतारधारी सिक्ख सैनिक मौजूद थे। २२ सिक्खों ने कुछेक हथियारों से ही दुश्मन फौज के तीव्र आक्रमण को तहस-नहस कर दिया। ६ घण्टों के घमासान युद्ध के बाद भी सिक्खों ने कबाइलियों को चौंकी के पास फटकने तक नहीं दिया। दुश्मन सेना के ६०० से ज्यादा सैनिकों को मारने के उपरांत गोली-सिक्का खत्म हो जाने के बाद ये २२ सिक्ख लड़ाई करते हुए, जूझते हुए शहादत को प्राप्त कर गए। सिक्खों की इन बहादुरी की पूरे विश्व में धूम मच गई। इंग्लैंड की रानी मलिका विक्टोरिया ने ब्रिटिश पार्लियामेंट के सेशन के दौरान दोनों सदनों में इन शहीदों को श्रद्धांजलि भेंट करते हुए कहा, "जिस देश की फौज में सिक्खों जैसी बहादुर कौम हो, वह देश लड़ाई के मैदान में कभी नहीं हार सकता।" इंग्लैंड की सरकार द्वारा इन बहादुर सिक्खों को 'इंडिया आर्डर ऑफ मैरिट' से सम्मानित किया गया। वारिसों को ५०० रुपए नकद एवं ५०-५० एकड़ ज़मीन दी गयी। इन शूरवीर सिंघों की बहादुरी के किस्से आज भी फ्रांस, इटली तथा जापान आदि देशों के स्कूली बच्चों को पढ़ाए जाते हैं। यूनेस्को द्वारा छापी गयी एक पुस्तक, जिसमें विश्व की ८ बड़ी लड़ाइयों का ज़िक्र है, इसमें अद्वितीय बहादुरी दिखाने वाले सारागढ़ी के शहीद सिक्खों की बहादुरी की कहानी भी दर्ज की हुई है।

समय-समय की सरकारों की आंखों में सिक्खों की दसतार चर्चा का विषय रही है। इसका एक कारण यह हो सकता है कि सिक्खों ने कभी भी किसी ज़ालिम सरकार के आगे झुककर, अपनी दसतार उतारकर गुलामी कबूल नहीं की बल्कि दसतार की आन-शान के लिए सिर-धड़ की बाज़ी लगा दी। यही कारण है कि भारत की आज़ादी में भी ८०% सिक्ख जूझे और इनका इंकलाबी संदेश भी यही था 'पगड़ी संभाल', जिसने सिक्खों में नयी रूह फूंक दी थी।

पहला विश्व-युद्ध १९१४ से १९१८ ई तक हुआ। इस जंग में सिक्खों ने बैल्ज़ियम की आज़ादी के लिए अपनी जानें न्यौछावर कीं। इनमें से सबसे ज्यादा कुर्बानियां करने वाले मेरठ डिवीज़न की ४७वीं सिक्ख रेजिमेंट के सिक्ख फौजी थे जिन्होंने विश्व-युद्ध का मुंह तोड़कर यूरोप को

आज़ाद करवाया था। बैल्ज़ियम की कौमी यादगार 'मैनन गेट' पर इन शहीद सिक्ख फौजियों का नाम सुनहरी अक्षरों में उकरा गया है। बैल्ज़ियम के ईपर शहर में जहां इन शहीदों का अंतिम संस्कार किया गया था वहां इन शहीदों की यादगारें स्थापित की गयी हैं। स्थानीय लोग हर वर्ष १५ नवंबर को बैल्ज़ियम की आज़ादी के दिन इन शहीदों को श्रद्धांजलि भेंट करते हैं। इन सिक्ख शहीदों की यादगारों के दर्शन करवाने के लिए सिंट टरुडन (बैल्ज़ियम), डैनहाग (हॉलैंड), इंग्लैंड तथा पेरिस के गुरु-घरों द्वारा खास बसों का प्रबंध किया गया है। कोलोन (जर्मनी) से भी जत्थे पहुंचते हैं। जब ये जत्थे मैनन गेट पर पहुंचते हैं तो बैल्ज़ियम के निवासी बड़ी गर्मजोशी से इनका स्वागत करते हैं। इंग्लैंड की महारानी एलिज़ाबेथ द्वारा उत्तरी आयरलैंड की सरकार की तरफ से इन शहीदों को श्रद्धांजलि भेंट की जाती है।

दूसरे विश्व-युद्ध के दौरान भी फौज़ियों ने इंडोनेशिया में घिरे उच्च लोगों को सुरक्षित हॉलैंड (नीदरलैंड) पहुंचाने के लिए अनेक शहीदियां प्राप्त कीं। इन लाचार लोगों को सिक्ख फौजी समुद्री जहाज द्वारा अपनी निगरानी तले रोटर डैम की बंदरगाह पर पहुंचा देते थे। इनकी बहादुरी से प्रभावित होकर सभी उच्च लोगों ने सिक्ख धर्म अपना लिया था। हॉलैंड के बूसम शहर का प्रबंध जर्मनी ने सिक्ख जंगी कैदियों को दे दिया था जहां के लोग आज भी सिक्खों की बहादुरी तथा उदारता की कहानियां सुनाते हैं। दूसरे विश्व-युद्ध के दौरान बरतानवी फौज ने फौजियों को लोह-टोप पहनना आवश्यक करार दिया परंतु सिक्खों ने अपनी आज़ादी की निशानी तथा सर का ताज दसतार पर किसी तरह का लोह-टोप पहनने से डटकर इंकार कर दिया। उनको सर पर गोली लगकर आज़ाद हस्ती के रूप में शहीद होना तो प्रवान था परंतु अपनी दसतार पर गुलामी का चिन्ह टोपी पहनकर अपनी जान बचाकर जीना मंज़ूर नहीं था। उन्होंने बरतानिया की सरकार को कह दिया कि जो सिक्ख सिपाही जंग के दौरान सिर पर गोली लगने से शहीद हो गए वे कोई पेंशन नहीं लेंगे परंतु अपनी दसतार के ऊपर लोह-टोप नहीं पहनेंगे।

पहले एवं दूसरे विश्व-युद्ध के दौरान सिक्ख फौजियों ने बरतानवी अधिकारियों द्वारा लोह टोप पहनने के आदेश को न मानते हुए दसतार पहनना जारी रखा। सिक्ख फौजियों ने दलीलें देकर सीनियर अधिकारियों को दसतार की जगह हैलमेट न पहनने के कारण समझाये। उनका कहना था कि दसतार हर सिक्ख के सिक्खी स्वरूप का अहम हिस्सा है। इसको पहनना उनके लिए श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का आदेश है। सिक्खों की रहित मर्यादा के अनुसार सिक्खों के लिए दसतार के बिना किसी किस्म की टोपी पहनना विवर्जित है। सिक्ख सर तो कटवा सकता है किंतु दसतार नहीं उतार सकता। यहां तक कि सिक्खों ने हैलमेट न पहनने के कारण सर पर चोट लगने से मिलने वाला मुआवजा भी लेने से इंकार कर दिया। इसके बावजूद सिक्खों ने फौज में दसतार पहनने का हक लेने के लिए बड़ी लंबी लड़ाई लड़ी और इसकी भारी कीमत चुकाई।

१९३९ ई में मिस्र में ५८ सिक्ख फौजियों ने हैलमेट पहनने के लिए मज़बूर करने पर रोष के रूप में बगावत कर दी। कोर्ट मार्शल के समय सज़ा सुनाने से पहले एक मौका दिया गया कि अगर वे काम पर वापिस चले जायेंगे तो उनको कोई सज़ा नहीं दी जाएगी किंतु इसके बावजूद भी सभी सिक्खों ने कहा, "नो हैलमेट डैत्थ अकसैपटेबल।" (मरना मंजूर हैलमेट नहीं) इस कारण इन सभी सिक्खों को पांच से नौ वर्ष तक

की काले पानी की सज़ा दी गयी। इसी तरह पंजाब रेजिमेंट की ३१वीं बटालियन के सूबेदार उजागर सिंघ द्वारा हैलमेट पहनने से इंकार करने के उपरांत उसको सज़ा के रूप में काहिरा के सिखलाई कैंप में भेज दिया और उसकी बटालियन को सिदी बरानी में इतालवियों के खिलाफ जंग करने के लिए भेज दिया गया। इस बटालियन ने अपने बहुत कम नुकसान पर दुश्मन के सैकड़ों जवानों को बंदी बना लिया। बटालियन की इतनी बढ़िया कारगुज़ारी दिखाने के उपरांत सूबेदार उजागर सिंघ को दोबारा तैनात कर दिया गया। जब उसी बटालियन का सूबेदार अहमद ख़ान हैलमेट पहनने के बावजूद भी सिर पर गोली लगने के कारण मर गया तो हैलमेट के दसतार से ज्यादा सुरक्षित न होने की सिक्खों की दलील सही साबित हुई। एक और मामले में हाँगकाँग में जब सिक्ख फौजियों ने हैलमेट पहनने से इंकार कर दिया तो उनको ७ साल बा-मुशक्कत कैद की सज़ा सुनाई गई। इस प्रकार कई तरह की घटनायें घटित होने के कारण सीनियर बरतानवी अधिकारियों द्वारा जूनियर अधिकारियों को १९४२ ई के मध्य तक सिक्ख सिपाहियों को हैलमेट पहनने के लिए मज़बूर न करने के लिए हुक्म दे दिए।

बाबा खड़क सिंघ को भारत की आज़ादी के लिए तथा अंग्रेजों की धक्केशाही के विरुद्ध अनेकों बार जेल जाना पड़ा। उन दिनों कैदियों को पगड़ी बांधने का अधिकार नहीं था। कैदियों को सर ढंकने के लिए सिर्फ टोपी ही दी जाती थी। बाबा खड़क सिंघ ने इस धक्केशाही के विरुद्ध जेल में ही संघर्ष किया। बाबा खड़क सिंघ को अंग्रेज सरकार ने डेरा बाबा गाज़ी खां की जेल में बंद किया हुआ था। ननकाणा साहिब के साके के बाद बाबा जी ने रोष के रूप में काली पगड़ी बांधनी शुरू कर दी। अंग्रेज सरकार ने बाबा जी के काली पगड़ी बांधने पर पाबंदी लगा दी। बाबा जी अपने फैसले पर अटल रहे। आखिर बाबा जी की दसतार जबरदस्ती उतार दी गयी। बाबा जी ने इस घटिया कार्यवाही के कारण रोष के रूप में जेल में केवल कछहिरे के बिना अपने शरीर के अन्य सभी कपड़ों का त्याग कर दिया। उनके हक के लिए अन्य कैदी भी आ गए। अंग्रेज सरकार ने बाबा जी पर हर प्रकार का तशद्दुद भी किया और लालच भी दिए परंतु बाबा जी टस से मस नहीं हुए। बाबा जी ने साढ़े पांच वर्ष का समय गर्मी-सर्दी में अपने शरीर पर केवल कछहिरा धारण करके ही व्यतीत किया। अंततः बाबा जी की जीत हुई। पंजाब विधान सभा ने १९२७ ई में प्रस्ताव पारित करके बाबा जी को बिना शर्त रिहा कर दिया और बाबा जी जेल में से काली दसतार सजाकर ही बाहर आए।

आज़ादी के उपरांत १५ अगस्त, १९४७ ई से अगस्त, १९४८ ई तक पाकिस्तानी फौज के मुखिया रहे जनरल सर फ्रेंक वाल्टर मैसरवी दसतार सम्बंधी कहते हैं, "दो विश्व-युद्धों के दौरान ८३,०५५ दसतारधारी सिक्ख जवान मारे गए तथा अन्य १,०९,०४५ ज़ख्मी हो गए। बरतानिया तथा दुनिया की आज़ादी के लिए सिक्खों द्वारा केवल दसतार बांधकर तोपों के गोले झेलने सिक्खों के विश्वास का प्रतीक हैं।"

इसी तरह लेफ्टिनेंट जनरल सर रेनाल्ड आर्थर सेवरी के अनुसार, "सिक्ख लगभग पांच गज लंबी दसतार बांधते हैं। हर रोज़ बांधी जाने वाली दसतार गोलियों का असर घटाने में कारगर होती है। मुझे मालूम पड़ा है कि सिक्ख जंग के दौरान एवं इसके बाद दसतारों में से गोलियां चुनते हैं। पहले विश्व-युद्ध के दौरान हम बरतानवी अधिकारियों ने सिक्खों को स्टील के हैलमेट पहनने के लिए मनाने की कोशिश की परंतु उन्होंने दृढ़ता से इंकार कर दिया। किसी सिक्ख को लोहे का

हैलमेट पहनने के लिए कहना उसके धार्मिक विश्वासों को ठेस पहुंचाना है।

१९४७ ई के बाद भारत-चीन जंग-१९६२ ई भारत-पाकि जंग-१९६५ ई, भारत-पाकि जंग-१९७१ ई तथा कारगिल जंग-१९९९ ई में सिक्खों ने अपनी बहादुरी के जौहर दिखाए। भारतीय फौज के लेफ्टिनेंट जनरल स. हरबख़्श सिंघ की बहादुरी की कहानियां आज भी बड़े फख्र से सुनायी जाती हैं। पंजाब प्रदेश के ज़िला संगरूर के गांव बडरुक्खां में जन्मे स. हरबख़्श सिंघ ने दूसरे विश्व-युद्ध, १९४७ ई के कबाइलियों के हमले, १९४७ ई की सेलटांग की लड़ाई, १९६२ ई की भारत-चीन जंग, १९६५ ई की भारत-पाकि जंग के दौरान लद्दाख से लेकर गुजरात तक की सीमा की रक्षा करते हुए बेमिसाल बहादुरी के कारनामे किए। इनकी बहादुरी के लिए इनको 'टिथवाल का नायक' कहकर सत्कार दिया जाता है। इनको मिले अनेकों मान-सम्मान में से 'पदम भूषण' तथा 'वीर चक्र' जैसे सम्मान भी शामिल हैं।

मोगा ज़िला के गांव बद्धनी कलां के मेजर जनरल स. गुरबख़्श सिंघ द्वारा भारत-पाकि-युद्ध के समय दिखायी बहादुरी भी किसी करामात से कम नहीं है। इन्होंने खेमकरन के क्षेत्र में पाकिस्तान की अपने से तीन गुना ज्यादा तथा मज़बूत टैंकों से लैस सेना का बड़ी ही दृढ़ता से मुकाबला किया। आप जी की कमांड तले थोड़े-से सिक्ख सिपाहियों ने बड़ी संख्या की दुश्मन सेना तथा उनकी आधी से ज्यादा टैंक रेजिमेंट का सफाया कर दिया। अगले दिन की सुबह तक अन्य बची टैंक रेजिमेंट ने हथियार फेंक दिए। इस बहादुरी भरे कारनामे के कारण आप जी को 'महावीर चक्र' से सम्मानित किया गया। इसके बाद बाढ़-पीड़ितों को अपनी जान पर खेलकर बचाने के बदले 'पदम श्री' से सम्मानित किया गया।

सन् १९९९ ई में कारगिल की जंग शुरू हो गयी। इस जंग के समय ७० इन्फेंटरी के कमांडर ब्रिगेडियर स. दविंदर सिंघ द्वारा दिखाई गयी बहादुरी ने सिक्खों की शानदार रिवायत को कायम रखा। इस जंग के दौरान सबसे ज़ोखिम भरा इलाका दुश्मन से इसी ब्रिगेड ने खाली करवाया तथा दुश्मन के सबसे ज्यादा हथियार इन्होंने ही कब्ज़े में लिए। सबसे ज्यादा शहादतें भी इसे ब्रिगेड ने दीं। इस जंग के दौरान दिखाई गयी बहादुरी के कारण इस ब्रिगेड को एक 'परमवीर चक्र', दो 'महावीर चक्र' तथा ३४ 'वीर चक्र' प्राप्त हुए।

सिक्ख आज दुनिया के कोने-कोने में पहुंचकर अपनी मेहनत एवं कामयाबी के झंडे गाड़ चुके हैं। परंतु उनको पराये देशों में भी अपनी अज़ादी की प्रतीक दसतार के लिए कम संघर्ष नहीं करना पड़ा। असल में १८४९ ई में जब अंग्रेजों ने पंजाब पर कब्ज़ा किया तो सिक्खों का संपर्क अंग्रेजों के साथ फौजियों के रूप में होने लगा और बहुत सारे सिक्खों को भारत से बाहर विदेशों में जाने का मौका मिला। १९०० ई तक बहुत सारे सिक्ख फौजी विदेशों में चले गए तथा वहीं बस गए। १९५० ई तक बहुत सारे प्रवासी अपने परिवारों को विदेशों में ले गए और वहीं निश्चित रूप से बस गए। विदेशों में निश्चित रूप से बसने से उनको सिक्ख धार्मिक चिन्हों, खासकर दसतार के लिए काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ा और अब भी करना पड़ रहा है। सिक्खों ने मात्र अपने देश भारत के लिए ही असंख्य कुर्बानियां नहीं कीं बल्कि दुनिया के दूसरे देशों के लिए, जैसे फ्रांस की आज़ादी के लिए भी कुर्बानियां की हैं। सिक्खों ने अनेकों कुर्बानियां देकर इंग्लैंड, बैल्ज़ियम तथा अन्य यूरोपी देशों की रक्षा भी की है। इनकी अनेकों यादगारें यूरोपीय देशों के संग्रहालयों में देखने को मिल जाती हैं। एक पुरातन पोस्ट कार्ड

में बैल्ज़ियम स्त्री सिक्ख फौजियों की वर्दी पर गुलाब का फूल टांग रही है। एक अन्य पोस्ट कार्ड की कैप्शन पर लिखा है कि "घबराने की जरूरत नहीं, अब जुझारू सिक्ख आ गए हैं। इन्होंने जंग का मुंह मोड़ देना है।" ब्रिटिश इम्पीरियल वार म्यूजियम लंदन में एक तस्वीर सुशोभित है जिसमें पूरे कद तथा पूरी तरह शस्त्रों से लैस सिक्ख फौजी अंग्रेज़ फौजियों के साथ मिलकर अफ़गानों का मुकाबला करते दिखाए गए हैं जिसमें अंग्रजों ने अपने सरों पर गोलियों एवं बमों से बचाव के लिए लोह-टोप पहने हैं, किंतु सिक्खों ने अपने सरों पर सुंदर दसतारें सजायी हुई हैं। गुरु जी के साजे-निवाजे सिक्ख आज भी अपने माता-पिता, बच्चों तथा बचपन के दोस्तों का असह बिछोड़ा झेलते हुए दुनिया के हर मुल्क की तरक्की में अपना योगदान डाल रहे हैं।

एक बार अमेरिका में 'प्रीतलड़ी' मैगज़ीन के संपादक स. गुरमुख सिंघ को सिनेमा हॉल में दाखिल होने के समय पगड़ी उतार देने के लिए मज़बूर किया गया, जिसके कारण उनको सिनेमा हॉल से बाहर आना पड़ा। आज भी जब कोई सिक्ख पश्चिमी देशों में प्रवेश करता है तो उसके दिमाग पर सबसे पहले यही प्रभाव डाला जाता है कि वह दसतार-मुक्त हो जाए। इसी तरह जब स. हरभजन सिंघ (योगी) अमेरिका पहुंचे तो उनको भी दसतार उतार देने की सलाह दी गयी परंतु वे अपने विरसे तथा इतिहास से अच्छी तरह से अवगत थे, जिसका उन्होंने अमेरिकियों को समझाने के लिए उनकी भाषा में प्रचार किया। परिणामतः हज़ारों अमेरिकी पुरुष व स्त्रियां दसतार की महानता को समझते हुए दसतारधारी बन गए। इंग्लैंड में ही १९७२-७३ ई में हर एक मोटरसाइकिल या स्कूटर सवार के लिए लोह-टोप पहनना जरूरी करार कर दिया गया जो सिक्ख मोटरसाइकिल सवारों के लिए समस्या बन गयी। सिक्खों ने दो पहिया सवारी का प्रयोग बंद कर दिया परंतु दसतार की जगह लोह-टोप नहीं पहने। आखिर, लंबी कानूनी लड़ाई के बाद सिक्खों ने दसतार की धार्मिक महत्ता दर्शाकर विजय प्राप्त की तथा इमारत के निर्माण वाले स्थानों पर भी सिक्खों को रिवायती पगड़ी बांधकर काम करने की आज्ञा मिल गयी। सिक्खों का गौरवमयी इतिहास जानने के बाद वहां की सरकार ने सिक्खों के धार्मिक जज़बतों की कद्र करते हुए सिक्खों को दसतार सजाकर इंग्लैंड की सड़कों पर मोटरसाइकिल चलाने की आज्ञा दी। इस सम्बंध में उन्होंने वहां के कानून में संशोधन किया। सिक्खों ने उस दिन खुशी का प्रकटावा करने के लिए अपने घरों में दीपमाला की। १९७७-७८ ई में इंग्लैंड के वुल्वरहैंप्टन शहर में स्कूल में छठी कक्षा में पढ़ते कुलविंदर सिंघ को दसतार सजाई होने के कारण स्कूल से निकाल दिया गया। बच्चा चुपचाप कक्षा से बाहर आया और एक गत्ते पर स्कूल से निकाले जाने के बारे में संक्षिप्त वर्णन लिखकर छाती पर लगाकर और स्कूल-बैग गले में डालकर सड़क के किनारे खड़ा हो गया। स्कूल से छुट्टी होने के बाद भी बच्चा वहीं खड़ा रहा। आते-जाते लोग उसकी ओर देखते और मुख्याध्यापक को बुरा-भला कहने लग जाते। अगले दिन शिक्षा विभाग के बड़े अफसर ने पूरी रात सर्दी से ठिठुरते कुलविंदर सिंघ को वहां से हटाया और उसको दसतार सजाकर स्कूल आने की आज्ञा दी। इस घटना ने पूरे इंग्लैंड में दर्शा दिया कि सिक्खों के लिए दसतार की क्या महानता है।

अमेरिका में १९८२ ई में क्लॉर्क ऐलन हैरिस नाम का अंग्रेज अमृत छककर सिंघ सज गया और उसने अपना नाम 'गुरू संत सिंघ खालसा' रख लिया। इस अंग्रेज गुरसिक्ख ने अमेरिका की फौज

में भर्ती होने की इच्छा जाहिर की। उसने सरकार को बताया कि उसने जो नया धर्म धारण किया है यह उसको ड्यूटी के प्रति पहले से ज्यादा वफ़ादार बनाता है। उसने सिक्ख इतिहास पर दृष्टि डालकर यह सिद्ध किया कि सिक्खों जैसा शूरवीर कोई नहीं तथा पूरी दुनिया इसको फौजी मानती है। उसने अमेरिकन फौज के इस दावे को भी नकारा कि जंग में दुश्मनों द्वारा ज़हरीली गैस को रोकने के लिए मुंह पर पहने जाने वाले मास्क को पहनने में दसतार कोई रुकावट नहीं बन सकती। आगे से विरोधियों ने यह बहाना बनाया कि दसतार सहित दौड़ा नहीं जा सकता। इस चुनौती को स्वीकारते हुए एक सिक्ख सरजेंट स. किरनबीर सिंघ (गरेवाल) ने फौज को चैलेंज किया। उसने दसतार के साथ मास्क पहना, ऊठक-बैठक लगाई तथा दो मील लंबी दौड़ लगाकर पांच हज़ार फौजियों को पीछे छोड़ा। उसको सबसे तेज दौड़ाक घोषित किया गया। इस सारी दौड़ के दौरान न तो उसका मास्क गिरा और न ही दसतार पर कोई असर हुआ। अंततः सिक्खों की विजय हुई। गुरू संत सिंघ खालसा को दसतार सहित फौज में भर्ती कर लिया गया।

कनाडा में एक सिक्ख ने पुलिस में भर्ती होने का इम्तिहान पास किया। जब उसको वर्दी पहनने के लिए दी गयी तो उसने टोपी की जगह दसतार की मांग की। केस प्रधानमंत्री तक पहुंच गया, जिसने कानून के माहिरों के साथ सलाह करके दसतार देने का हुक्म कर दिया और सिक्ख पुलिस अफसर को टोपी की जगह दसतार देना मंजूर कर लिया। एक बार स. प्रीतम सिंघ (जौहल) अफ्रीका में बरतानवी आठवीं आर्मी में होते हुए जंग के दौरान जीते हुए तगमों को अपनी वर्दी पर सजाकर और अपने अन्य पांच दसतारधारी फौजी साथियों को साथ लेकर रायल कनाडियन लीजनस हॉल वैनकूवर में अपने गोरे फौजियों के शहीदी यादगारी समागम में भाग लेने गए। जब हॉल में दाख़िल होने लगे तो उनको इसलिए रोक लिया गया कि उनके सर पर दसतारें सजाई हुई थीं। स. प्रीतम सिंघ ने इस धक्केशाही का विरोध किया और समागम का बहिष्कार करके लंबी लड़ाई लड़ी।

मार्च, २००४ से फ्रांस में रहते सिक्ख अपनी आज़ादी की निशानी दसतार के लिए संघर्ष कर रहे हैं, क्योंकि फ्रांस सरकार ने प्रत्यक्ष दिखाई देते धार्मिक चिन्ह को पहनकर सार्वजनिक स्थानों पर जाने पर पाबंदी लगा दी है जिसके कारण स्कूलों में पढ़ते सिक्ख विद्यार्थियों के लिए दसतार पहनकर स्कूल में जाने पर पाबंदी लगा दी। फ्रांस में लगभग २०० सिक्ख विद्यार्थी स्कूलों में पढ़ते हैं। इस बंदिश वाले कानूनों के प्रति सभी सिक्ख जत्थेबंदियों तथा विदेशों के सिक्खों द्वारा तथा पंथ की सिरमौर जत्थेबंदी शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर द्वारा भारी रोष प्रकट किया जा रहा है। फ्रांस सरकार द्वारा मामला हल करने का भरोसा भी दिलाया जा रहा है। सिक्खों ने अपनी आन-शान की प्रतीक दसतार को बहाल रखने के लिए फ्रांस में अपने बच्चों के लिए अलग स्कूल खोलने का फैसला कर लिया है।

गत कुछ समय से सचेत और अचेत रूप में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सिक्ख पंथ के गौरव की प्रतीक दसतार को बेइज्जत करने की घटनायें घटित होने लगी हैं जो कि असहनीय हैं। सिक्खों की दसतार उतरवाकर हवाई अड्डों पर तलाशी ली जाने लगी है जिसने देश-विदेश में बसते सिक्खों को गहरी चिंता में डाला हुआ है। सिक्ख पंथ ने अलग-अलग जगह वाज़िब अनुशासन कायम रखते हुए अमन-पसंद ढंग से ऐसी घटनायों के प्रति रोष दर्ज किया है। देश के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंघ तक भी इस सम्बंधी शिरोमणि

गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष महोदय सम्बंधित सरकारों के पास यह गंभीर मामला उठाने के लिए लिखती पत्रों द्वारा तथा अन्य साधनों द्वारा पहुंच कर चुके हैं, किंतु लगता है कि इस दिशा में सतर्कता से सम्बंधित मामले को भेजा नहीं गया। सिक्ख अपनी प्रतिभा, मेहनत, लगन, ईमानदारी, दृढ़ता जैसे गुणों के कारण दुनिया भर में अपनी पहचान बना चुके हैं। अमेरिका की फौज एवं पुलिस में भी कुछ सिक्ख नौजवान भर्ती हुए हैं। सवाल पैदा होता है कि क्या अमेरिका के हवाई अड्डों के अधिकारी इस सच्चाई से अनजान हैं? सिक्ख जिस भी देश में बसे हैं वहां के विकास एवं प्रगति में वे अहम योगदान डाल रहे हैं। अमेरिका व अन्य पश्चिमी मुल्कों में वे मेयर एवं गवर्नर तक के ऊंचे पदों पर अपनी योग्यता तथा ऊंची सामर्थ्य के कारण बैठे हुए हैं। ऐसी कौम को आने-बहाने बेइज़्जत करना बेहद बुरा कार्य है जिसको रोकने का पूरा प्रयत्न होना चाहिए। हमें समूह सिक्खों को इस सूरत-ए-हाल के रू-ब-रू अपनी पंथक तथा कौमी भूमिका को, अपने ब्रह्मांडी अक्स को और भी ऊंचा करने के लिए प्रत्यनशील होना चाहिए ताकि विश्व भर में अपने मौलिक गुणों की महक के आधार पर हम अपनी इतनी स्पष्ट पहचान कायम कर लें कि पूरी दुनिया हमें हमारे दसतारधारी सुंदर एवं निर्मल स्वरूप तथा हमारे ऊंचे आचरण से, सही-सच्चे रूप में पूरी तरह से वाक़िफ हो और हम देश-कौम के तथा पंथ के मान-सम्मान में और बढ़ोतरी कर सकें। जो भी हो सिक्ख दसतार की आन-शान हर सूरत-ए-हाल में बरकरार रहनी चाहिए। इस आन-शान को बरकरार रखने में अन्य दलों को भी निर्णायक सहयोग करना चाहिए। यह कुल संसार तथा मनुष्यता के कल्याण व सर्वपक्षीय विकास के लिए मददगार हो सकता है।

आज हमें अपने देश में भी दसतार के लिए कोई कम जद्दोजहद नहीं करनी पड़ रही! कई जत्थेबंदियां, जो सिक्खों के इस आज़ादी के चिन्ह दसतार से ईर्ष्या करती हैं और सिक्खों की आज़ाद हस्ती को खत्म करना चाहती हैं, अपनी संकुचित चालें चलकर सिक्खों को उनके अमीर विरसे से दूर करने के लिए प्रत्यनशील रहती हैं। कभी सिक्खों को आतंकवादी बतलाकर, राह चलते सिक्ख नौजवानों को पुलिस की मदद से जलील करके उनकी दसतार पर व्यंग्य कसे जाते रहे; कभी निर्दोष दसतारधारियों का सरेआम कत्लेआम किया गया; जेलों में बंद कर दिया गया। एक तरफ तो सिक्खों ने अनेकों कुर्बानियां करके दसतार की आन-शान बहाल रखी किंतु दूसरी तरफ घटिया साजिशों के अधीन सिक्ख बच्चों को उनके इतिहास से दूर रखकर, भविष्य के सुनहरी सपने दिखाकर, फिल्मों में दसतारधारियों के घटिया चरित्र दिखाकर, मीडिया द्वारा प्रचार करके, फैशन-शो में गुमराह करके पगड़ी-मुक्त होने के लिए प्रेरित किया जा रहा है।

आज हमें जरूरत है अपनी आज़ाद हस्ती तथा आज़ाद पहचान कायम रखने की! हमें सचेत हो जाना चाहिए ताकि हम अपनी आज़ादी की प्रतीक दसतार की आन-शान तथा सम्मान-बहाली के लिए पुरज़ोर कोशिश करें! जो भाई जाने-अनजाने में भूलकर दसतार को बेदावा (त्याग) दे चुके हैं, उनको उनका इतिहास बताकर उनकी टूटी गांठें तथा हमेशा आज़ादी तथा स्वाभिमान के साथ जीने की प्रेरणा दें।

आओ! दसतार सहित जीएं; दसतार सहित काम करें और दसतार को साथ लेकर ही मरें!

भाई संतोख सिंह : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

*-डॉ. हरमहेंद्र सिंघ**

भाई संतोख सिंह एक सर्वोतमुखी प्रतिभा-सम्पन्न कवि थे। उन्होंने भारतीय साहित्य, काव्य-शास्त्र, दर्शन, ज्योतिष, वैद्यक, इतिहास पुराण आदि का गहरा अध्ययन किया था, जिसका प्रभाव उनकी रचनाओं में सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। इन्हीं गुणों के कारण ही कैथल नरेश भाई उदै सिंघ ने उन्हें राज-कवि का गौरव प्रदान किया था। उनके नाम के आगे महाकवि और चूड़ामणि महाकवि जैसे संबोधन निश्चय ही उनकी प्रतिभा के द्योतक हैं।

यह सचमुच विडंबना ही है कि इतने महान कवि को काफी समय तक हिंदी विद्वानों ने दृष्टिविगित रखा। तासी, ग्रियर्सन, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, बाबू श्याम सुंदर दास, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ. रामकुमार वर्मा इत्यादि हिंदी साहित्येतिहासकारों में से किसी ने भी अपने ग्रंथों में भाई संतोख सिंघ का नामोल्लेख तक नहीं किया।

मिश्रबंधुओं ने केवल इतने तक ही यह परिचय सीमित रखा है–- नाम संतोख सिंघ पटियाला, ग्रंथ वाल्मीकि रामायण भाषा, रचना-काल संवत् १८९० दि.। स्पष्ट है कि यह सूचना भी गलत है, क्योंकि उन्होंने यह रचना कैथल में की थी, पटियाला में नहीं।

पंजाबी इतिहासकारों ने भी उनका वर्णन नहीं किया। भाई कान्ह सिंघ और प्रि. तेजा सिंघ आदि पंजाबी विद्वानों ने इनके बारे में संक्षिप्त ही कहा है।

डॉ. हरिभजन सिंघ ने १९६३ ई. में प्रकाशित अपने शोध-प्रबंध 'गुरमुखी लिपि में हिंदी काव्य' में भाई संतोख सिंघ को 'निरमले संत' मानने से इंकार कर दिया है और इनके बारे में लिखने में अपनी असमर्थता दर्शायी है। वे लिखते हैं कि निरमले संत महंत दयाल सिंघ ने भाई सुक्खा सिंघ तथा भाई संतोख सिंघ को भी निरमले संतों में गिना है। इन दोनों की रचनाएं 'गुर बिलास' और 'श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' प्रथम कोटि के प्रबंध काव्य हैं। निश्चित प्रमाण के अभाव में हम इन्हें निरमले-पंथी साधुओं में स्थान नहीं दे पाये। इस प्रकार एक निश्चित प्रमाण के अभाव में ये विद्वान लेखक उनके इस शोध-प्रबंध में अपना स्थान नहीं पा सका।

भाई संतोख सिंघ निरमले संत थे अथवा नहीं, इस संबंधी दो विद्वानों के मत डॉ. निर्मल कुमार कौशिक ने अपने शोध-प्रबंध में उद्धृत किए हैं। प्रो. प्यारा सिंघ 'पदम' का कथन है कि "निरमले साधू गृहस्थी नहीं होते। भाई संतोख सिंघ के पांच पुत्र थे। यदि किसी निरमले लेखक ने लोभ कर लिया कि अमुक व्यक्ति, चूंकि अच्छा विद्वान था, इसलिए वह जरूर निरमला ही था, ऐसी तर्क कमज़ोरी होती है।" डॉ. सुरिंदर सिंघ (शेरगिल), गांव सवाड़, चंडीगढ़ का कथन है कि "आज भी खोज जारी है। अगर उनके शिक्षा-गुरु और दीक्षा-गुरु दोनों प्रमाणित हों तो उन्हें निरमले संत मान सकते हैं। वैसे उनकी व्याख्या पद्धति निरमले संतों की सी है।" डॉ. तारन सिंघ का कथन है कि "भाई संतोख सिंघ ने अपने आप को निरमला कहीं नहीं लिखा, पर निरमले विद्वानों ने

**१२५, कबीर पार्क, श्री अमृतसर-१४३००२, मो. ९३५६१-३३६६५*

उन्हें निरमला माना है।" डॉ. जोगिंदर सिंघ का मत है कि "निरमले शाखा के जपु जी साहिब के श्रेष्ठ टीकाकारों में से भाई संतोख सिंघ और पं. तारा सिंघ नरोत्तम आदि के नाम लिए जा सकते हैं। डॉ. मोहन सिंघ तो उन्हें भ्रमवश पंजाबी का कवि मान बैठे हैं।"

प्रसिद्ध पंजाबी विद्वान डॉ. वीर सिंघ (संपा:) 'गुर प्रताप सूरज ग्रंथावली', तृतीय संस्करण (१९५४), ज्ञानी खजान सिंघ (संपा:) 'गरब गंजनी टीका' (१९६१), डॉ. जय भगवान गोयल (संपा:) 'गुर प्रताप सूरज ग्रंथ के काव्यक्ष' (१९६६) के बहुमूल्य योगदान से महान कवि भाई संतोख सिंघ का जीवन-वृतांत प्रकाश में आया है और इन्होंने भाई संतोख सिंघ के व्यक्तित्व और कृतित्व पर काफी प्रकाश डाला है। इसके अतिरिक्त स. शमशेर सिंघ अशोक-- 'पैप्सू का प्राचीन हिंदी साहित्य' (१९५७), डॉ. गोविंद नाथ राजगुरु-- 'गुरमुखी लिपि में हिंदी गद्य' (१९६९), डॉ. चंद्रकांत बाली-- 'पंजाब-प्रांतीय हिंदी साहित्य का इतिहास' (१९६२), डॉ. सत्यपाल गुप्त-- 'गुरमुखी लिपि में हिंदी साहित्य' (१९८४), डॉ. मनमोहन सहगल- श्री ओम प्रकाश शास्त्री-- 'मध्यकालीन हिंदी साहित्य : पंजाबी का संदर्भ' (१९८५), डॉ. ईश्वर सिंघ-- 'गुरमुखी लिपि में उपलब्ध हिंदी का रीति काव्य'. डॉ. आशानंद वोहरा, 'जपु जी दा अलंकारित सौंदर्य' (१९७५) आदि विद्वानों ने भी भाई संतोख सिंघ पर अपनी कलम चलाई है।

डॉ. जय भगवान गोयल ने उनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उन्हें युग-प्रवर्त्तक कवि का सम्मान दिया है। वे लिखते हैं कि "जिस समय हिंदी साहित्य शृंगारिक भावनाओं से आक्रांत था, कवि अपने सामाजिक तथा मानवीय उत्तरदायित्व को भूले हुए थे तथा भारतीय समाज अंग्रेजों के आतंक से पीड़ित था। भाई संतोख सिंघ ने एक युगप्रवर्त्तक कवि के रूप में जनता को मानववादी तथा समन्वयवादी संदेश दिया। व्यवहारिक जीवन के मोह के स्थान पर पवित्र आचरण, संयम और आध्यात्मिक जीवन का आदर्श जनता के सामने रखा और साथ ही भारतीय जनता में एकता की भावना जागृत करके अत्याचारी के दमन की प्रेरणा दी।"

महाकवि संतोख सिंघ रीतिकालीन दरबारी संस्कृति की उपज थे। उनकी महानता किसी सीमा तक परिस्थितियों की देन भी थी। यदि उन्हें कैथल नरेश भाई उदै सिंघ का आश्रय और साथ न प्राप्त होता तो उनके मन में संकल्प कैसे साकार होते? परिस्थितियों ने जहां उनकी अद्वितीय प्रतिभा को प्रखरता प्रदान की, वहां उनकी निजी प्रतिभा ने भी कम महत्त्व का साहित्य नहीं रचा। उनकी बाणी की रसिकता की छाप रसिक-हृदय व्यक्तियों के दिलों में अभी तक अंकित है।

सत्य तो यह है कि भाई संतोख सिंघ ने इन ग्रंथों-- गुरू नानक प्रकाश, श्री गुर प्रताप सूरज और विशेषकर गरब गंजनी टीका के आधार पर उस समय के साहित्यकारों तथा टीकाकारों में सबसे ज्यादा प्रसिद्धि प्राप्त की। आपके संपूर्ण व्यक्तित्व में उदारता, नम्रता, निर्भयता, त्याग और परोपकार की भावना दृष्टिगोचर होती है। उन्हें एक उच्च कोटि के दार्शनिक, इतिहासकार, टीकाकार, सच्चे निरमले संत, आदर्श सिक्ख, श्रेष्ठ विचारक, मानवतावादी मान लिया जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

भाई संतोख सिंघ ऐसे महाकवि थे जो यश अथवा धन आदि के लिए नहीं, वरन आत्मसुख तथा जनहित के लिए काव्य-रचना करते थे। वे प्रतिभा-सम्पन्न विद्वान कलाकार थे। उनमें महाकवि के सभी मानवीय गुण विद्यमान थे और उनका व्यक्तित्व बड़ा तेजस्वी और प्रभावशाली था। मुख्यत: भारतीय महाकवि आत्मा में परमात्मा के दर्शन करने वाले महामानव के लक्षणों से विभूषित रहे हैं। भाई संतोख सिंघ उसी माला के एक मोती हैं।

इन्हें उनसे पृथक करके नहीं देखा जा सकता।

प्रो. आशानंद वोहरा लिखते हैं कि "गुरु-काव्य सम्राट कवि, कुल चंद चूड़ामणि महाकवि भाई संतोख सिंघ का नाम भारतीय साहित्य में उनकी काव्य-साधना के कारण, उनकी ज्ञान-गंगा के फलस्वरूप सदैव सुनहरी अक्षरों में लिखा रहेगा। ये त्रिकालदृष्टा सचमुच राष्ट्रीय गौरव के अधिकारी हैं।

रचनाएं :

१. नामकोश (अमरकोश टीका), (संवत् १८७८ वि/१८२१ ई), पद्यमयी रचना
२. श्री गुरू नानक प्रकाश (संवत् १८८० वि/ १८२३ ई) गद्यमयी रचना
३. गरब गंजनी टीका (जपु जी साहिब टीका), (संवत् १८८६ वि/१८२९ ई) गद्यमयी रचना
४. वाल्मीकि रामायण (अनुवाद), (संवत् १८९० वि/१८३३ ई), पद्यमयी रचना
५. आत्म-पुराण टीका (अप्राप्त), (संवत् १८९१ वि/१८३४ ई), गद्यमयी रचना
६. श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ (संवत् १९०० वि/ १८४३ ई) पद्यमयी रचना

फुटकल रचनाएं :

१. श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के प्रसंग
२. श्री गुरु उसतति
३. प्रश्न-विधि
४. गरु बनाने की विधि
५. सहीरफी (संदिग्ध)

अलंकार काव्य में भव्यता, सौंदर्य, मार्मिकता, कलात्मकता एवं स्पष्टता लाने के साथ-साथ अर्थों की सूक्ष्मता और बिंब विधान के द्वारा चित्रात्मकता प्रदान करते हैं। गरब गंजनी टीके में अलंकारों की इन्हीं अद्भुत विशेषताओं का निरूपण हुआ है। जपु जी साहिब पर अनेक विद्वानों ने टीकाकारी की है, लेकिन अलंकारयुक्त टीका करने का श्रेय भाई संतोख सिंघ को दिया जा सकता है, जिसे इन्होंने गरब गंजनी टीका के रूप में प्रस्तुत किया है। भाई संतोख सिंघ का प्रयोजन 'जपु जी साहिब' की साहित्यक विलक्षणता और सैद्धांतिक महानता को लोगों तक पहुंचाना था, इसलिए उन्होंने समय की मांग के अनुसार इसे बहुत ही सुंदर भाषा में प्रस्तुत किया।

इस टीका में एक-एक तुक के कई अर्थ दिए गए हैं जो निरमला संप्रदाय के टीकों की विशेषता कही जा सकती है। इस टीका में दर्शन गंभीर विषय का सरल तथा बोधगम्य शैली में प्रतिपादन हुआ है। विषय को स्पष्ट करने के लिए रामायण, महाभारत तथा पुराणों के प्रसंगों का भी उपयोग किया है। स्वयं कोई प्रश्न उठाकर शंकाओं का निराकरण किया गया है। दूसरों के मतों की परीक्षा करके उनका खंडन तथा स्वमत प्रतिपादन किया है। भाई संतोख सिंघ ने इस टीका में जपु जी साहिब की साहित्यकता का भी विश्लेषण किया है। प्रत्येक पंक्ति में जो अलंकार शब्द-सौष्ठव हैं, उनका भी विवेचन किया है और साथ ही उनके लक्षण भी दिए हैं।

डॉ. जय भगवान गोयल कहते हैं कि गरब गंजनी टीका संस्कृत की प्राचीन भाष्य-शैली में लिखी गई टीका है। हिंदी में इस प्रकार की टीका दुर्लभ है। इस रचना के आधार पर जब हम उनके आचार्यत्व पर विचार करते हैं तो इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भाई संतोख सिंघ रस, ध्वनिवादी आचार्यों की श्रेणी में आते हैं। अलंकार को इन्होंने रस, ध्वनि से भिन्न, वाह्य आभूषणों की भांति शोभा वृद्धि करने वाला तथा रस का उपकार करने वाला कहा है :

शबद अरथ कर करि है जोइ।
रस उपकार सु भूखन होई।
शबद अरथ जो चित्रत करिही।
चमतकार छवि अधिकै धरिही।
भूखन जैसे पहिर पानी।
तैसे अलंकार मिलि बानी।

इसे आगे स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि "रस, तै व्यंग तै भिन्न अरु अर्थ के, चमत्कार को प्रकट करै सो अलंकार। वा शब्दारथ के दो लक्षण हैं।"

गरब गंजनी टीके में पचास से अधिक अलंकारों के लक्षण दिए गए हैं। भाई संतोख सिंघ ने किसी विशेष क्रम से अलंकार नहीं दिए हैं बल्कि जपु जी साहिब टीका करते समय जो भी अलंकार बीच में आते गए उन्होंने केवल उन्हीं के लक्षण दिए हैं, इसलिए यह रचना हिंदी के उन ग्रंथों से भिन्न है, जिनसे किसी नियम अथवा क्रम से अलंकारों का विवेचन किया गया है। वास्तव में लेखक का उद्देश्य अलंकारों का मौलिक एवं विशद विवेचन करके आचार्यत्व दिखाना नहीं है, वरन् अपने आश्रयदाता भाई उदै सिंघ को जपु जी साहिब के अलंकारों को समझाना और रीतिकालीन परंपरा का निर्वाह करना मात्र है। फिर भी यह मानना पड़ेगा कि अलंकार-शास्त्र का उन्हें विशद ज्ञान था।

भाई संतोख सिंघ के अलंकार-शास्त्र के लक्षणों को देखकर यह प्रतीत होता है कि उन्होंने कुवलयानंद, चंद्रालोक, साहित्यदर्पण, काव्यप्रकाश आदि काव्यशास्त्री ग्रंथों का अध्ययन किया था। भाई संतोख सिंघ ने कुछ अलंकारों के गद्य में लक्षण भी दिया है। इससे पूर्व हिंदी के शायद ही किसी कवि ने दिया हो। अलंकार विवेचन के अतिरिक्त इस रचना में जपु जी साहिब के अन्य काव्य तत्वों पर भी प्रकाश डाला गया है और उसमें निहित शब्द-शक्ति, गुण-दोष आदि का भी विवेचन किया गया है तथा यथास्थान उनके लक्षण भी दिए गए हैं। शब्द-शक्तियों को इन्होंने अलंकारों से भिन्न स्थान दिया है, क्योंकि यह एक टीका मात्र है, इसलिए इसमें भावपक्ष नगण्य है। यह रचना कवि के दार्शनिक, आचार्यत्व तथा वैयाकरण रूप को ही अधिक प्रकट करती है। फिर भी आरंभिक मंगलों तथा उनके आश्रयदाता के परिचयात्मक छंदों में उनकी काव्य-प्रतिभा प्रस्फुटित हुई है। मंगलों में उनके हृदय का भक्ति-भाव मुखरित हुआ है, परंतु उनकी शैली नामकोश की अपेक्षा सरल है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की कृपाण-महिमा के वर्णन में अच्छी अलंकारिकता और ओज है। उनका रूप-चित्रण भी सजीव बन पड़ा है। भाई उदै सिंघ का परिचयात्मक वर्णन भी सरल शैली में है। वैसे अनुप्रास, वीप्सा, रूपक, उत्प्रेक्षा तथा उपमा की छटा इन छंदों में भी देखी जा सकती है। इनमें दोहा, कबित्त और चौपई का प्रयोग हुआ है।

डॉ. जय भगवान गोयल कहते हैं कि आधुनिक युग में जिस प्रकार से आलोचना में मनोवैज्ञानिक, मनोविश्लेषणात्मक, दर्शन, समाज-शास्त्र, काव्य-शास्त्र आदि को समन्वित करके साहित्य को समझने एवं समझाने के प्रयत्न हो रहे हैं, वैसा ही एक सफल प्रयास भाई संतोख सिंघ ने अपने युग के वातावरण में एवं ज्ञान स्तर के अनुकूल इस रचना में किया है। वस्तुत: हिंदी की यह प्रथम आलोचनात्मक पुस्तक है जिसमें किसी-किसी समय काव्य-रचना की शास्त्रीय आधार पर समीक्षा की गई है। भाई संतोख सिंघ के गरब गंजनी टीका के विश्लेषण से ये निष्कर्ष प्राप्त होते हैं--

गुरबाणी शास्त्र आदि का खंडन नहीं करती। गुरबाणी ने केवल मुक्ति के सुगम साधन दर्शाये हैं, क्योंकि कलयुगी जीव स्मृतियों के बताए साधन निभा नहीं सकते। इस प्रकार भाई संतोख सिंघ ने वेदों के अनुसार ही गुरमति को निश्चित करने का प्रयास किया है।

भाई संतोख सिंघ ने करता पुरख (प्रभु) को सत, चित, आनंद माना है। वह जगत का आदि है। वह अद्वैत है। माया को निर्वचनीय कहीं नहीं कहा। माया प्रभु की व्याप्ति है और प्रभु करता पुरख है। उससे जगत की उत्पत्ति होती है।

भाई संतोख सिंघ ने श्री गुरु नानक देव जी

(शेष पृष्ठ ५१ पर)

रिजक की तलाश और उसकी चिंता

*-डॉ. कशमीर सिंघ नूर**

रिजक का भावार्थ है-- रोज़ी। रोज़ी का भावार्थ है-- रोज़गार यानि जीविका। 'रोटी' शब्द भी रोज़ी से ही बना है। 'रोज़ी' और 'रोटी' समानार्थक शब्द हैं। यह कहना मुश्किल है कि इनमें से कौन-सा तत्सम शब्द है और कौन-सा तद्भव। शायद ही दुनिया में कोई साधारण प्राणी ऐसा हो, जिसे रिजक की तलाश न हो। जीविकोपार्जन हेतु हम साधारण सांसारिक प्राणी कोई न कोई व्यवसाय, रोज़गार, नौकरी या काम-धंधा जरूर करते हैं। इसके बिना गुज़र-बसर हो ही नहीं सकती। रिजक की तलाश में हम यहां-वहां जाते हैं, घूमते रहते हैं। कई बार तो हम बहुत दूर तक चले जाते हैं। अनेक लोग रिजक की तलाश में अपना घर-बार छोड़कर, अपने परिजनों से दूर विदेशों में चले जाते हैं।

रिजक की तलाश में हम उम्र भर भटकते रहते हैं। मज़े की बात यह भी होती है कि कई बार रिजक की तलाश में हम जिस जगह पर पहुंचते हैं, वहां पर यह हमें नहीं मिलता और जिस स्थान पर हम अभी पहुंचे नहीं होते हैं, उस स्थान पर हमारे भाग्य, हमारे हिस्से के रिजक का प्रबंध उस राजक, कर्ता-करीम-रहीम ने किया होता है। हम हैं कि रिजक की प्राप्ति हेतु यहां-वहां, इधर-उधर भटकते ही रहते हैं। श्री गुरु अरजन देव जी राग गूजरी में बड़े सुंदर शब्दों में फ़रमान करते हैं :

काहे रे मन चितवहि उदमु जा आहरि हरि जीउ परिआ ॥ (पन्ना १०)

ऐ मन! तू उद्यम (प्रयत्नों) के बारे में क्यों सोचता है, प्रभु स्वयं तेरे लिए यत्न में लगा हुआ है। गुरु जी आगे फ़रमान करते हुए कृपा करते हैं :

सैल पथर महि जंत उपाए ता का रिजकु आगै करि धरिआ ॥ (पन्ना १०)

भावार्थ यह कि चट्टानों व पत्थरों में भी परमात्मा जीव पैदा करता है और उनकी खुराक पहले से ही वहां पर बनाकर रख देता है।

हमें अपने रिजक की प्राप्ति हेतु सच्चे हृदय से, ईमानदारी के साथ मेहनत करते रहना चाहिए। महापुरुष, संत, गुरु, भक्त, साधु भी स्वयं अपने हाथों से परिश्रम, मेहनत कर किरत करते हैं। वे किरत करते हुए करता पुरख को याद रखते हैं। किरत करते हुए कर्ता को याद रखने से, उसका नाम जपने से किरत भी सिमरन बन जाती है। रिजक की तलाश करते वक्त सबसे बड़े राजक, दयालु, परमात्मा का ध्यान करने से हमारे तमाम यत्न, प्रयत्न, क्रिया-कलाप सिमरन बन जाते हैं। हम अच्छी तरह जानते हैं कि वाहिगुरु सबको देने वाला है। हमारे पैदा होने से पहले वह हमारी रोज़ी-रोटी, खुराक का प्रबंध कर देता है। वह गर्भावस्था में मौजूद प्रत्येक प्राणी तक आहार पहुंचाता है। फिर रोज़ी-रोटी, रिजक की इतनी ज्यादा फ़िक्र क्यों? हम क्यों इस फ़िक्र में अपना चैन, सुख, नींद गंवाते हैं? रिजक की तलाश करते समय, काम-धंधा करते समय हमें अकाल पुरख को नहीं भुलाना चाहिए, उस पर पूर्ण भरोसा रखना चाहिए। श्री गुरु अरजन देव जी हमारा मार्गदर्शन करते हैं :

सिरि सिरि रिजकु संबाहे ठाकुरु
काहे मन भउ करिआ ॥२॥

**बी-एक्स ९२५, मुहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, मो. ९८७२२-५४९९०*

ऊडे ऊडि आवै सै कोसा
तिसु पाछै बचरे छरिआ ॥
तिन कवणु खलावै कवण चुगावै
मन महि सिमरनु करिआ ॥३॥
सभि निधान दस असट सिधान
ठाकुर कर तल धरिआ ॥
जन नानक बलि बलि सद बलि जाईऐ
तेरा अंतु न पारावारिआ ॥४॥

भावार्थ यह है कि प्रत्येक जीव को परमात्मा रिजक पहुंचाता है। ऐ मेरे मन! तू क्यों डरता है? कूंज (सारस) उड़ते-उड़ते सैकड़ों कोस दूर आ जाती है। वह अपने बच्चे पीछे छोड़ आती है। उन बच्चों को कौन खिलाता व चुग्गा चुगाता है, यह सब प्रभु की लीला है।

हमें अपने रिजक की तलाश अवश्य करते रहना चाहिए, हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठे रहना चाहिए। 'कितना मिलेगा', 'कब मिलेगा', यह चिंता नहीं करनी चाहिए। जिसने हमें पैदा किया है, जिसने सबको पैदा किया है, उसे हम सबकी फ़िक्र है। बस, उसे सदैव याद रखना है, उसे भुलाना नहीं है। तीसरे गुरु श्री गुरु अमरदास जी अनंदु साहिब बाणी में एक स्थान पर बड़े सुंदर शब्दों में फ़रमान करते हैं :

माता के उदर महि प्रतिपाल करे
सो किउ मनहु विसारीऐ ॥
मनहु किउ विसारीऐ एवडु दाता
जि अगनि महि आहारु पहुचावए ॥(पन्ना ९२०)

अर्थात् जो (परमात्मा) मां के गर्भ में (बच्चे का) पालन करता है उसे दिल से क्यों भुलाएं? इतने बड़े दाता को दिल से क्यों भुलाएं जो (गर्भ की) अग्नि में आहार पहुंचाता है?

लोभ, लालच से दूर रहकर, मोह-माया से बचकर हमें ईमानदारी से गुज़र-बसर करने लायक रिजक जुटाना है और श्री गुरु अमरदास जी के इन पावन अनमोल वचनों को याद रखते हुए मन में संतोष की भावना को सदा कायम रखना चाहिए :

भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भारि ॥
(पन्ना १)

भाई संतोख सिंघ : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

(पृष्ठ ४९ का शेष)

को परमेश्वर का अवतार कहा है, क्योंकि वे अवतार थे इसलिए उन्हें गुरु धारण करने की आवश्यकता नहीं थी।

भाई संतोख सिंघ ने जीवात्मा असल स्वरूप को *"आदि सचु जुगादि सचु"* माना है। ब्रह्म को जीव का स्वरूप ही माना है। अलंकारण को भी उन्होंने चेतन माना है और चित्त, मन, अहंकार तथा बुद्धि उसी के अंग माने हैं।

भाई संतोख सिंघ ने मुक्ति को परमार्थ मानकर इसे आवागमन से छुटकारा माना है। केवल 'सतिनामु' का सिमरन ही मनुष्य को बंधन से छुटकारा दिला सकता है।

भाई संतोख सिंघ ने कर्म को परमेश्वर के हुक्म अधीन माना है। हर कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है। उन्होंने प्रभु-नाम-सिमरन को प्रमुखता दी है और सतिसंगत को सच्ची टकसाल कहा है। सिक्ख के लिए गृहस्थ में रहते हुए मुक्ति का संकल्प स्वीकार किया है।

भाई संतोख सिंघ युगप्रवर्त्तक कवि थे। उन्होंने यश अथवा धनहित नहीं बल्कि जनहित काव्य-रचना की। महाकवि व्यास, वाल्मीकि, तुलसी, सूर आदि कवियों ने जिस परंपरा को अपनाया, भाई संतोख सिंघ ने भी उसी परंपरा को न केवल सशक्त किया बल्कि पावन और निर्मल किया। भारतीय साहित्य को समृद्ध करने के लिए उनका नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा। भाई संतोख सिंघ वास्तव में राष्ट्रीय गौरव के अधिकारी हैं।

ऐतिहासिक गुरु-स्थान

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब से सम्बंधित स्थान

*-बीबी मनमोहन कौर**

सिक्खों के आठवें गुरु श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी का जन्म कीरतपुर साहिब में श्री गुरु हरिराय साहिब जी के घर माता क्रिशन कौर जी की कोख से १६५६ ई में हुआ। गुरु साहिब जी का जीवन-काल, गुरगद्दी-काल सभी गुरु साहिबान से छोटा है। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी को पांच वर्ष, दो महीने तथा सोलह दिन की उम्र में गुरगद्दी की प्राप्ति हुई। बेशक गुरगद्दी पर बैठने के समय आप अन्य सभी गुरु साहिबान से छोटी उम्र के थे, फिर भी आपने एक समर्थ गुरु के रूप में ही सिक्ख धर्म की अगुआई की। अपने पड़दादा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के पद-चिन्हों पर चलते हुए निधड़क होकर उस समय के शासक औरंगज़ेब को उसके इन्सानियत के प्रति ज़ालिमाना रवैय्ये के कारण दर्शन देने से इंकार कर दिया। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी ने अपने जीवन का ज्यादातर समय कीरतपुर साहिब तथा दिल्ली में गुज़ारा। इसके अलावा संगत को दर्शन देने हेतु कुछ दिन पंजोखरा तथा अंबाला में भी ठहरे। आप जी कुल दो वर्ष, पांच महीने, छब्बीस दिन गुरगद्दी पर विराजमान रहने के उपरांत सात वर्ष आठ महीने छब्बीस दिन गुज़ारकर दिल्ली में चेचक से पीड़ित रोगियों की सेवा करते हुए रिश्ते में अपने दादा लगते श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी को गुरगद्दी की जिम्मेदारी सौंपकर ज्योति-जोत समा गए। आप जी की याद में जो पवित्र स्थान सिक्ख संगत द्वारा बनाए गए हैं, वे निम्नलिखित हैं :

१. गुरुद्वारा शीश महिल साहिब, कीरतपुर साहिब : गुरुद्वारा शीश महिल साहिब ज़िला रूपनगर के नगर कीरतपुर साहिब में सुशोभित है। इस स्थान पर श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी का जन्म हुआ था। इस स्थान को श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी के अलावा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी, श्री गुरु हरिराय साहिब जी का पावन स्पर्श भी प्राप्त है।

२. गुरुद्वारा तख़त कोट साहिब, कीरतपुर साहिब : गुरुद्वारा तख़त कोट साहिब, कीरतपुर साहिब में श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी की पावन याद में सुशोभित है। स्रोतों के अनुसार इस स्थान पर श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी की संवत् १७१८ बिक्रमी को दशहरे वाले दिन गद्दीनशीनी हुई थी। इस स्थान को श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब तथा श्री गुरु हरिराय साहिब जी का पावन स्पर्श भी प्राप्त है। गुरुद्वारा साहिब के अंदर २४ घंटे गुरु का लंगर अटूट चलता है। इस स्थान की संपूर्ण सेवा-संभाल शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा की जा रही है।

३. गुरुद्वारा मंजी साहिब, पंजोखरा : हरियाणा के ज़िला अंबाला के नगर पंजोखरा में श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी की पावन याद में गुरुद्वारा मंजी साहिब सुशोभित है। ऐतिहासिक स्रोतों के अनुसार गुरु साहिब जी दिल्ली को जाते हुए इस

** #८३६३, गली नं. २, गुरु रामदास नगर, सुलतानविंड रोड, श्री अमृतसर-१४३००६*

स्थान पर विराजे थे। इस स्थान पर ही गुरु जी ने पंडित लाल चंद का अहंकार तोड़ते हुए छज्जू नामक एक कुहार के सर पर अपनी छड़ी रखकर उससे गीता के अर्थ करावाए थे।

४. गुरुद्वारा साहिब पातशाही आठवीं, थानेसर : थानेसर को 'थनेसर' या 'थनेसुर' भी कहा जाता है। थानेसर, हरियाणा प्रांत के ज़िला कुरुक्षेत्र का एक प्रसिद्ध नगर है जो प्राचीन समय से ही हिंदुओं का मुख्य केंद्र रहा है। थानेसर में सनेहत तीर्थ के पास जहां श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी ने लोगों को सिक्खी का उपदेश दिया था, वहां गुरु साहिब की पावन आमद की याद में गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है। गुरुद्वारा साहिब की सेवा-संभाल का प्रबंध शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी करती है।

५. गुरुद्वारा बंगला साहिब, दिल्ली : नयी दिल्ली के गोल डाकखाने के पास गुरुद्वारा बंगला साहिब की आलीशान इमारत सुशोभित है। वास्तव में इस स्थान पर पहले राजा जय सिंह की हवेली थी। जब श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी १६६४ ई. में दिल्ली आए थे तो उस समय दिल्ली में हैज़े की बहुत भयानक बीमारी फैली हुई थी। गुरु जी ने अपने हाथों से बीमारों की सेवा की। हर तरफ गुरु जी की जय-जयकार होने लग गयी। यह सुनकर राजा जय सिंह की पटरानी गुरु जी के दर्शन को विह्वल हो उठी और उसने गुरु जी को अपने महल में आने का न्यौता दिया। गुरु जी के पावन आगमन की याद में इस हवेली को स्मारक के रूप में बदल दिया गया, जो बाद में मुगल राज्य काल के समय तोड़कर मस्जिद बना दी गयी थी। जब सिक्खों ने दिल्ली फ़तहि की तो सरदार बघेल सिंघ ने १७८३ ई. में यहां गुरुद्वारा साहिब का निर्माण करवाया। गुरुद्वारा साहिब में श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी का जन्म उत्सव विशेष रूप से मनाया जाता है। इस गुरुद्वारा साहिब की सेवा-संभाल का प्रबंध दिल्ली सिक्ख गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा किया जाता है।

६. गुरुद्वारा साहिब बाला जी, दिल्ली : गुरुद्वारा साहिब बाला जी दिल्ली की बाहरी रिंग रोड पर श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी की पावन याद में सुशोभित है। यह स्थान किसी समय यमुना दरिया के किनारे पर हुआ करता था। इस स्थान पर गुरु जी के शरीर की अंतिम रस्में ३ वैसाख, संवत् नानकशाही १९६, चेत्र सुदी चौदह, संवत् १७२१ बिक्रमी को की गयी थीं। बाद में माता साहिब देवां तथा माता सुंदरी जी का अंतिम संस्कार भी यहां किया गया था। १७८३ ई. में स. बघेल सिंघ ने इस स्थान पर गुरु जी की याद में गुरुद्वारा साहिब का निर्माण करवाया। यहां श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी का ज्योति-जोत दिवस बड़ी श्रद्धा-भावना से मनाया जाता है। पूरा प्रबंध दिल्ली सिक्ख गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा किया जाता है।
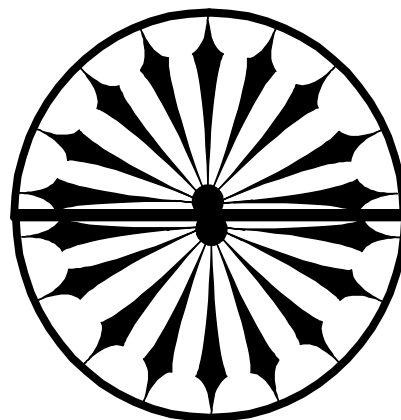
गुर सिखी बारीक है . . . २३

-डॉ. सत्येन्द्रपाल सिंघ*

पहाड़ी राजा भीमचंद ईर्ष्यालु प्रकृति का था और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी से अकारण वैर-भाव रखता था। उसने एक बार गुरु साहिब और सिक्खों पर हमले की कुटिल रणनीति तैयार की, जिसके तहत एक हाथी को नशे में मदमस्त करके आगे भेजा ताकि लोहगढ़ किले के मुख्य द्वार को उस हाथी द्वारा ध्वस्त करने के बाद उनकी सेना किले के भीतर प्रवेश करके सिक्खों और गुरु साहिब को घेर ले। सिक्खों को भीमचंद की इस व्यूह-रचना का पता चल गया। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने शारीरिक रूप से बलवान दुनीचंद को हाथी का मुकाबला करने का आदेश दिया, किंतु दुनीचंद भयभीत होकर पीछे हट गया। यह देखकर भाई बचित्तर सिंघ ने स्वयं आगे आकर यह कार्य करने का प्रस्ताव रखा। भाई बचित्तर सिंघ ने हाथी द्वारा हमला करने की प्रतीक्षा किए बिना द्वार खोलकर, अपने घोड़े पर सवार होकर हाथी पर बरछे से ज़ोरदार प्रहार कर दिया। प्रहार इतना सशक्त था कि हाथी के मस्तक पर लगी हुई धातु की प्लेट को बेंधता हुआ बरछा मस्तक में जा धंसा। बिजली-सी फुर्ती से पुन: अपनी तलवार से प्रहार कर भाई बचित्तर सिंघ ने उस मतवाले हाथी की सूंड काट दी, जिससे घबराकर घायल हाथी पीछे मुड़ गया और भीमचंद की सेना को ही रौंद डाला। दुनीचंद शारीरिक रूप से बलवान होते हुए भी हाथी का सामना करने से पीछे हट गया, क्योंकि वह सतिगुरु से एकरूप नहीं हो सका था, जबकि सामान्य सिक्ख भाई बचित्तर सिंघ अदभुत पराक्रम इसलिए कर सका क्योंकि गुरु-प्रेम ने उसके अंतर को प्रकाशित कर उसे परम आत्मबल का स्वामी बना दिया था। जीवन की बाज़ी सतिगुरु से जुड़े बिना नहीं जीती जा सकती :

इहु जगु चउपड़ि खेलु है आवा गउण भउजल सैंसारे।
गुरमुखि जोड़ा साधसंगि पूरा सतिगुर पारि उतारे।
लगि जाइ सो पुगि जाइ गुर परसादी पंजि निवारे।
गुरमुखि सहजि सुभाउ है आपहुं बुरा न किसै विचारे।
सबद सुरति लिव सावधान गुरमुखि पंथ चलै पगु धारे।
लोक वेद गुरु गिआन मति भाइ भगति गुरु सिख पिआरे।
निज घरि जाइ वसै गुरु दुआरे ॥

(वार ३७:२७)

भाई गुरदास जी के अनुसार जीवन के उद्देश्य को वही प्राप्त कर सकता है जो परमात्मा से जुड़ साधसंगत कर रहा है। इससे वह अपने विकारों को वश में कर लेता है, जिससे जीवन में सहजता आ जाती है, सारे संशय और दुविधाएं मिट जाती हैं। आत्मानुशासन आने से वह सावधान-एकाग्र मन से सतिगुरु की राह पर दृढ़ता से चलने लगता है। गुरसिक्ख को परमात्मा-प्रेम की भक्ति में रस आने लगता है और वह वास्तविक रूप में सच को धारण कर लेता है। भाई बचित्तर सिंघ ने सतिगुरु के

**E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो. : ९४१५९६०५३३*

प्रेम को धारण कर लिया था। उस प्रेम-रस में वो सराबोर था, इसीलिए मदमस्त हाथी के मस्तक को धातु के आवरण के बावजूद भेद सका।

आत्मा का परमात्मा के प्रेम में लीन होना एक अद्‌भुत घटना है जिसे सिक्ख गुरु साहिबान ने सम्भव कर दिखाया :

अचरज नो आचरजु है आचरजु होवंदा।
विसमावै विसमादु है विसमादु रहंदा।
हैराणै हैराणु है हैराणु करंदा।
अबिगतहुं अबिगतु है नहिं अलखु लखंदा।
अकथहुं अकथ अलेखु है नेति नेति सुणंदा।
गुरमुखि सुख फलु पिरम रसु वाहु वाहु चवंदा।
(वार ३८:१८)

गुरसिक्ख का परमात्मा से प्रेम-सम्बंध महानतम् आश्चर्य और विस्मय उत्पन्न कर देने वाला है। यह अति हैरान करने वाला और वर्णन से परे है। जिसे यह प्रेम-रस प्राप्त हो जाता है वह गुरसिक्ख स्वयं भी इसको व्यक्त नहीं कर पाता और आवाक ही रहता है। परमात्मा के प्रति आभार में उसे परमात्मा का स्वरूप दिखने लगता है :

उसतति निंदा दोऊ बिबरजित तजहु मानु अभिमाना ॥
लोहा कंचनु सम करि जानहि ते मूरति भगवाना ॥
तेरा जनु एकु आधु कोई ॥
कामु क्रोधु लोभु मोहु बिबरजित हरि पदु चीन्है सोई ॥ (पन्ना ११२३)

सामान्यत: मनुष्य किसी की निंदा अथवा किसी की चाटुकारिता में व्यस्त रहता है। वह मान-अपमान के फेर में ही पड़ा हुआ है। गुरसिक्ख इनसे दूर रहता है और सांसारिक वास्तुओं-स्थितियों में सुख अथवा दुख नहीं मानता है अर्थात् समदृष्टि-समव्यवहार रखता है। ऐसा करके ही विकारों पर विजय पायी जा सकती है और परमात्मा में रम सकने की अवस्था प्राप्त होती है। विकारों से रिक्त होना मान-अपमान, स्तुति-निंदा से ऊपर उठ जाना एक तरह से अंतर की शुद्धि है। ऐसे शुद्ध अंत:करण के गुरसिक्खों को ही श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'खालसा' का नाम दिया। एक ऐसा गुरसिक्ख जिसने विकारों का त्याग कर दिया है और गुरमति के अनुसार मन को करके उसमें परमात्मा के प्रेम को बसा लिया है, वही 'खालसा' है :

मनु सबदि मरै परतीति होइ हउमै तजे विकार ॥
जन नानक करमी पाईअनि हरि नामा भगति भंडार ॥ (पन्ना १६२)

परमात्मा का प्रेम बड़े ही भाग्य से मिलता है और जिसे यह प्रेम-रस मिल जाता है वह परमात्मा की कृपा से भरपूर हो जाता है। उसके समस्त दुखों का नाश हो जाता है :

सा धन रंगु माणे जीउ आपणे नालि पिआरे ॥
अहिनिसि रंगि राती जीउ गुर सबदु वीचारे ॥
गुर सबदु वीचारे हउमै मारे इन बिधि मिलहु पिआरे ॥
सा धन सोहागणि सदा रंगि राती साचै नामि पिआरे ॥
अपुने गुर मिलि रहीऐ अंम्रितु गहीऐ दुबिधा मारि निवारे ॥
नानक कामणि हरि वरु पाइआ सगले दूख विसारे ॥ (पन्ना २४४)

दिन-रात परमात्मा के प्रेम में आनंदित रहने वाला गुरसिक्ख अपने विचारों का त्याग करके सतिगुरु के शबद (गुरमति) का ही विचार करता है। इस तरह वह सतिगुरु को प्राप्त कर लेता है और अपने जीवन को सार्थक कर लेता है। अपने विचार का त्याग कर देना और गुरु के विचार को धारण कर लेना, गुरु के विचार का अनुकरण करना, गुरसिक्ख का दृष्टिमान लक्षण है। यही सतिगुरु को प्रिय है।

सतिगुरु के विचार को किस तरह धारण करना है, इसका मानदंड स्थापित करने के लिए

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने १६९९ ई की वैसाखी वाले दिन एक बड़ी संगत (सभा) का आयोजन किया, जिसमें अस्सी हज़ार से अधिक संख्या में सिक्ख शामिल हुए। इस महान आयोजन में गुरु साहिब एक अनूठा इतिहास लिखने के संकल्प से मंच पर दृढ़ता से खड़े हुए और ओजपूर्ण बाणी में उपस्थित सिक्खों की आत्मा को झिंझोड़ते हुए निडर होकर अन्याय के विरुद्ध कमर कसने का आह्वान किया। फिर अपनी चमकदार तीखी कृपाण को एकाएक लहराते हुए कहा कि यह कृपाण खून की प्यासी है और आप में से किसी एक का खून मांगती है। गुरु साहिब की इस मांग ने वहां इकट्ठे हुए भारी जनसमूह में सनसनी उत्पन्न कर दी। आवाक होकर सिक्ख एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। वे सभी भ्रम में थे, क्योंकि उनके मनों में दो विचार चल रहे थे-- एक, गुरु का विचार, जो बलिदान मांग रहा था, दूसरा, अपना निज का विचार, जो अपने जीवन के संकट से व्यथित हो रहा था। तमाम संगत में से एक सिक्ख उठा-- भाई दया राम (भाई दया सिंघ)। उसने पूर्ण विनम्रता से निवेदन किया, "सतिगुरु जी! यह सिर हाज़िर है। इसे चाहे जैसे ले लो और मेरा जीवन सफल करो। सच्चे पातशाह! यह सिर तभी आपका हो गया था जब मैंने इसे आपके आगे टेक दिया था। मैं तो इसे आपकी अमानत के रूप में उठाये फिर रहा हूं। इस अमानत को लौटाने में जो विलंब हुआ है, मैं इसके लिए क्षमा चाहता हूं। आपका शुक्रिया, आपने मांगकर मेरा सिर लिया है। इसके अतिरिक्त और है ही क्या मेरे पास जो आपको अर्पण कर सकूं? सब आपकी कृपा और दया के कारण ही है।"

भाई दया राम जी के इस निवेदन की नींव पर 'खालसा पंथ' की साजना हुई। इसके बाद भाई धरम दास जी, भाई मुहकम चंद जी, भाई साहिब चंद जी, और भाई हिंमत राय जी सतिगुरु के विचार के धारक बने और पहले 'पांच सिंघ' (प्यारे) सज कर खालसा पंथ के ध्वजवाहक बने। वे गुरु के विचार पर चलकर अमर बन गए। उन्होंने अपना जीवन तो सफल किया ही औरों की सद्प्रेरणा के स्रोत भी हो निखरे :

गुरमति मानिआ करणी सारु ॥
गुरमति मानिआ मोख दुआरु ॥
नानक गुरमति मानिआ परवारै साधारु ॥
(पन्ना ८३३)

गुरसिक्ख वह है जो गुरमति को मान रहा है और गुरमति के अनुसार आचरण कर रहा है। कार्य वही सफल है जो गुरमति के अनुरूप है। आवागमन और मोह-माया के जंजाल से मुक्ति का द्वार गुरमति ही दिखाती है। गुरमति को वही धारण कर सकता है जिसका अंतर शुद्ध हो गया है और वह परमात्मा-प्रेम की राह पर चल पड़ा है। अन्य मति उसके चित्त में ही नहीं आती :

चीति न आवसि दूजी बाता सिर ऊपरि रखवारा ॥
बेपरवाहु रहत है सुआमी इक नाम कै आधारा ॥
पूरन होइ मिलिओ सुखदाई ऊन न काई बाता ॥
ततु सारु परम पदु पाइआ छोडि न कतहू जाता ॥
(पन्ना ८८४)

गुरसिक्ख परमात्मा को अपना स्वामी मान लेता है और उसके ही आदेश को मानने का संकल्प कर लेता है। वह अन्य किसी बात में विश्वास नहीं रखता और अपने जीवन को परमात्मा के सहारे पर ही टिका देता है। इससे वह निश्चिंत हो जाता है और भक्ति की सार को पहचानकर परम पद अथवा मोह-माया से मुक्ति पा लेता है। उसके मन में बस, परमात्मा के प्रेम की ज्योति जलती है और इससे ही वह 'खालसा' कहलाता है :

जागति जोति जपै निसि बासुर एकु बिना मन नैक न आनै ॥

पूरन प्रेम प्रतीति सजै ब्रत गोर मढ़ी मठ भूल न मानै ॥
तीरथ दान दया तप संजम एकु बिनां नहि एक पछानै ॥
पूरन जोति जगै घट मैं तब खालिस ताहिं न खालिस जानै ॥ (दसम ग्रंथ)

परमात्मा की प्रेमपूर्ण प्रतीति ही गुरसिक्ख की आराधना है। यही उसका सबसे बड़ा तीर्थ, दान, जप-तप है। वह भूलकर भी किसी अन्य विश्वास की ओर नहीं जाता। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने खालसा पंथ की साजना करके सिक्खों को अमृत-पान कराया और वे सिंघ सज गये। तत्पश्चात स्वयं गुरु साहिब ने उनसे अमृत छक कर अपनी समस्त शक्ति उनमें निहित कर दी, उन्हें परम पद का अधिकारी बना दिया। इसके साथ ही खालसा की इस श्रेष्ठता को उन्होंने खालसा के कर्म से जोड़ दिया :

जे अपने गुर ते मुख फिरहै ॥
ईहां ऊहां तिनके ग्रहि गिरहैं ॥
इहा उपहास न सुरपुरि बासा ॥
सभ बातन ते रहै निरासा ॥
दूख भूख तिन को रहै लागी ॥
संत-सेव ते जो हैं तिआगी ॥
जगत बिखै कोई काम न सर ही ॥
अंतहि कुंड नरक की पर ही ॥ (बचित्र नाटक)

गुरसिक्ख यदि गुरमति से बेमुख हो जाता है तो उसका कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता। वह उपहास का पात्र बनता है, निराश और अभावग्रस्त रहता है। वह नरक का भागी बनता है। गुरमुख होने में ही सच्चा सुख है।

एक बार श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबार में एक राजा आया। जब गुरु साहिब अपने कार्य निपटाकर विश्राम के लिए जाने लगे तो उनकी निगाह उस राजा पर पड़ी। गुरु साहिब ने राजा से कहा कि उसे यहां देखकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई है। उन्होंने राजा से कुछ मांगने को कहा। राजा, जिसके पास राज, धन-दौलत सब कुछ था, उसने कहा कि गुरु साहिब उसे अपना आशीर्वाद दे दें। गुरु साहिब ने पास खड़े एक दीन-हीन-से सिक्ख भाई निहाल सिंघ की ओर इशारा करते हुए राजा से कहा कि "क्या उसे इस सिक्ख जैसा बना दें?" राजा ने चकित होते हुए कहा, "क्या आप हमसे नाखुश हैं जो हमें निहाल सिंघ जैसा बनाना चाहते हैं?" गुरु साहिब ने भाई निहाल सिंघ को बुलाकर कहा कि "भाई निहाल सिंघ! हम तुमसे बहुत खुश हैं। क्या तुम्हें इस राजा जैसा बना दें?" भाई निहाल सिंघ बड़ी विनम्रता से हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला, "मुझसे क्या खता हो गई महाराज, जो आप मुझे इस राजा जैसा बनाना चाहते हैं?"

राजा यह देखकर चकित रह गया कि यह निर्धन-सा सिक्ख भाई निहाल सिंघ उस जैसा राजा क्यों नहीं बनना चाहता। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने राजा की शंका का समाधान करते हुए कहा कि "भाई निहाल सिंघ बाहर से दिखने में चाहे निर्धन ही दिखे, अपनी सेवा और समर्पण के बल पर यह परमात्मा से इतना जुड़ गया है कि इसका जीवन हर प्रकार के आनंद से भर गया है। राजा बनकर यह सेवा और समर्पण की अवस्था से विमुख नहीं होना चाहता।" गुरु साहिब ने राजा को कहा कि "वे उसे भाई निहाल सिंघ जैसा इसलिए बनाना चाहते थे कि सच्चा आनंद और सुख भाई निहाल सिंघ जैसे जीवन में ही संभव है।"

विकारों को त्यागकर मन में परमात्मा के प्रेम की ज्योति जलायें, विषय-विकारों के किसी भी विचार को भूलकर भी निकट न आने दें, तब गर्व से स्वयं को 'खालसा' कहें!

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष साहिबान :७

स. गोपाल सिंघ कौमी

*-स. रूप सिंघ**

अकाल के पुजारी, निष्काम पंथ-सेवक, धार्मिक, सामाजिक, राजसी जीवन-मूल्यों के पहरेदार स. गोपाल सिंघ कौमी का जन्म भाई हेम सिंघ के घर १८९७ ई में गांव गढ़ फ़तहिशाह, लायलपुर में हुआ। अक्षर-ज्ञान गांव के स्कूल से प्राप्त करके खालसा स्कूल, लायलपुर से विद्या प्राप्त की तथा उच्च शिक्षा की प्राप्ति हेतु खालसा कॉलेज, श्री अमृतसर में दाख़िल हो गए। खालसा कॉलेज उस समय अंग्रेज-भक्तों के ही अधीन था, जिस कारण इन्होंने खालसा कॉलेज छोड़कर नेशनल कॉलेज, लाहौर से १९२१ ई में बी. ए की डिग्री प्राप्त की। उस समय गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर पूरे जोश से चल रही थी। इनका मिलाप प्रसिद्ध सिक्ख नेता स. तेजा सिंघ समुंदरी के साथ हुआ। बस फिर क्या था, वे तन-मन से गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर में कूद पड़े। १५ नवंबर, १९२० ई. को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर की सृजना के समय इनको सदस्य नामज़द किया गया। १३ अक्तूबर, १९२३ ई को गुरु का बाग के मोर्चे के समय इनको शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के ओहदेदारों तथा सदस्यों सहित गिरफ्तार किया गया और सितंबर, १९२६ ई तक ये जेल में बंद रहे।

गुरुद्वारा ननकाणा साहिब के साके व गुरु का बाग के मोर्चे में कौमी जी ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। गुरु का बाग के मोर्चे के समय इनको तीन वर्ष की कैद तथा २००० रुपये नकद जुर्माने की सज़ा सुनाई गई। १९२६ ई में स. गोपाल सिंघ कौमी को फिर गिरफ्तार कर लिया गया तथा इनको दो वर्ष की सज़ा व एक हज़ार रुपये नकद जुर्माना भरने की सज़ा दी गयी। जेल में लंबा समय कैद रहने के कारण कुछ अकाली अगुआ मज़बूर हो गए थे। इन अगुओं को यह भी फिक्र थी कि यह कैद आने वाले समय में किसी को जज, सुप्रिंटेंडेंट, इंस्पेक्टर आदि बनने में रुकावट हो सकती है। इन हालातों को देखकर ही स. गोपाल सिंघ कौमी ने यह गाना शुरू कर दिया था, *"की खट्टिआ कमेटी विच आ के, ज़िंदगी नूं रोग ला लिआ। मेरी तौबा!"*

किले में कैद अगुआ गुरुद्वारा कानून के मामले पर दो दलों में बंट गए। सिक्ख गुरुद्वारा कानून सबको प्रवान था किंतु शर्तों सहित रिहायी सबको प्रवान नहीं थी। स. गोपाल सिंघ कौमी ने शर्तों को मानकर रिहायी को अप्रवान कर दिया। बब्बर अकाली लहर को दबाने के लिए सरकार ने होशियारपुर तथा जलंधर ज़िलों में बहुत सख़्ती बरती। बब्बर अकाली लहर के समय स. गोपाल सिंघ कौमी पहली बार बिलगा गांव से गिरफ्तार किए गए। बब्बर अकालियों पर हुए तशद्दुद की जांच करने के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर ने पड़तालिया कमेटी बनायी जिसको काम शुरू करने के समय ही सरकार ने गिरफ्तार कर लिया। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने

**सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर-१४३००१; मो. ९८१४६-३७९७९*

सरकार की इस धक्केशाही का डटकर विरोध किया तथा एलान किया कि दोआबा में हुए सरकारी जुल्म-ओ-सितम की जांच जरूर करेगी। जांच करने के लिए स. सरमुख सिंघ झबाल, स. गोपाल सिंघ कौमी, स. गुरचरन सिंघ वकील, स. भाग सिंघ कनेडियन तथा स. राम सिंघ पर आधारित पांच-सदस्यीय सब-कमेटी, नियुक्त हुई। लोग इतने डरे हुए थे कि जांच कमेटी के पास भी नहीं आते थे। अभी जांच-कार्य अधूरा ही था कि पुलिस ने इस कमेटी को भी गिरफ्तार कर लिया।

'साइमन कमीशन गो बैक' के संग्राम के समय स. गोपाल सिंघ कौमी ने लाला लाजपत राय के साथ लाठियां खाईं। इनको गिरफ्तार करके मीआं वाली जेल में बंद कर दिया गया। इस जेल-यात्रा के समय इनका मिलाप शहीद-ए-आज़म स. भगत सिंघ के साथ हुआ। अंग्रेज सरकार की धक्केशाही के विरुद्ध इन्होंने जेल के अंदर ६४ दिन निरंतर अनशन रखा।

१९३३ ई में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के हुए जनरल चुनाव के समय स. गोपाल सिंघ कौमी टांडिआं वाला, ज़िला लायलपुर से सदस्य चुने गए। ८ अप्रैल, १९३३ ई. को गुरुद्वारा एक्ट के अनुसार हुई पहली जनरल एकत्रता के चेयरमैन के चुनाव के समय स. गोपाल सिंघ कौमी ने स. मंगल सिंघ का नाम पेश किया, जो मीटिंग में सभी सदस्यों ने प्रवान कर लिया। १७ जून, १९३३ ई को १२ बजे गुरुद्वारा कानून के अनुसार पंजाब सरकार के बुलावे पर टाऊन हॉल, श्री अमृतसर में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की जनरल एकत्रता हुई, जिसमें १४२ सदस्य हाज़िर थे। इसमें शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष के चुनाव का प्रस्ताव पेश हुआ। ज्ञानी शेर सिंघ की तज़वीज़ तथा स. अमर सिंघ शेर-ए-पंजाब की ताईद पर अध्यक्ष के पद के लिए बाबा खड़क सिंघ का नाम पेश हुआ, जिस पर कुछ सदस्यों ने एतराज किया। फिर मास्टर तारा सिंघ जी की तजवीज़ पर स. निरंजन सिंघ की ताईद पर स. गोपाल सिंघ कौमी बी. ए. का नाम पेश हुआ। किसी द्वारा भी विरोध न होने के कारण कौमी साहिब सर्वसम्मति से शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष चुने गए। इस तरह स. गोपाल सिंघ कौमी शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष के पद पर आसीन हो गए तथा उन्होंने उपाध्यक्ष के नाम की तजवीज़ मांगी और जत्थेदार तेजा सिंघ अकरपुरी उपाध्यक्ष चुने गए। इसके उपरांत १०-सदस्यीय कार्यकारिणी कमेटी चुनी गयी, जिसमें मास्टर तारा सिंघ जी का नाम भी शामिल था। इसके बाद यह एकत्रता सर्वसम्मति से अगले दिन दोपहर ११ बजे तक मुलतवी कर दी गयी।

१८ जून, १९३३ ई. को निश्चित समय व स्थान पर जनरल एकत्रता स. गोपाल सिंघ कौमी की अध्यक्षता में आरंभ हुई, जिसमें १३५ सदस्य हाज़िर थे। अध्यक्ष साहिब की आज्ञा पर गुरुद्वारा एक्ट के अनुसार लोकल कमेटियां, गुरुद्वारा कमेटी श्री तरनतारन साहिब, गुरुद्वारा कमेटी श्री मुकतसर साहिब, गुरुद्वारा कमेटी श्री अनंदपुर साहिब, गुरुद्वारा कमेटी श्री ननकाणा साहिब, गुरुद्वारा कमेटी लाहौर, श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर का चुनाव किया गया।

इस कार्यवाही के बाद ज्ञानी करतार सिंघ लायलपुरी ने कार्यकारिणी कमेटी से त्याग-पत्र दे दिया। फिर स. गोपाल सिंघ कौमी ने भी अध्यक्ष-पद से त्याग-पत्र दे दिया। उनकी जगह जमांदार प्रताप सिंघ शंकर अध्यक्ष चुने गए।

इस तरह अब तक के शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के इतिहास के सबसे कम समय के लिए अर्थात् लगभग २३-२४ घंटे तक स. गोपाल सिंघ कौमी अध्यक्ष-पद पर शोभनीय रहे। त्याग-पत्र देने के उपरांत कौमी जी ने कहा कि "मेरी पार्टी ने मुझे यह पदवी बख़्शी थी, पार्टी के हुक्म से ही मैंने त्याग-पत्र दिया है।" इस बयान से कौमी जी की पार्टी के प्रति वफ़ादारी तथा समर्पण-भावना का अंदाज़ा लगाया जा सकता है।

२९ अक्तूबर, १९३३ ई को हुई जनरल एकत्रता के समय स. गोपाल सिंघ कौमी शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की कार्यकारिणी कमेटी के सदस्य नामज़द हुए। १० अगस्त, १९३४ ई को स. जगत सिंघ वासू की तजवीज़ तथा स. गोपाल सिंघ कौमी की ताईद से महत्त्वपूर्ण गुरमता पास हुआ कि "शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की एक एकत्रता के ख़्याल में किसी एक आदमी को समूचे पंथ का डिक्टेटर मानना गुरमति के उसूलों, पंथक रिवायतों एवं पंचायती रिवाज़ के खिलाफ है। ऐसा करना, जिस तरह कल एक सज्जन स. खड़क सिंघ जी सम्बंधी डिक्टेटर होने का एलान कर रहे हैं, सिक्खी की शान के विरुद्ध है।"

स. गोपाल सिंघ कौमी ने इस मीटिंग के समय यह भी स्पष्ट किया कि जिस मामले के बारे में रूलिंग हो चुकी है उस बाबत दोबारा विचार नहीं हो सकता। स. गोपाल सिंघ कौमी की तजवीज़ पर ही तख़्त श्री पटना साहिब को भूकंप के कारण पहुंचे नुकसान के बारे में सहायता भेजने के लिए प्रस्ताव पारित किया। २१ अक्तूबर, १९३४ ई को स. गोपाल सिंघ कौमी फिर कार्यकारिणी के सदस्य चुने गए।

१९४२ ई में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के समय कौमी जी को फिर गिरफ्तार कर लिया गया। इनको तीन वर्ष की कैद की सजा सुनाई गई जो इन्होंने मीआंवाली, मुलतान, अंबाला तथा सियालकोट जेल में काटी। कुल मिलाकर लगभग १३ वर्ष इन्होंने अपने जीवन का कीमती समय जेल में बिताया, किंतु कभी भी हालात से समझौता नहीं किया, हमेशा सच के सिद्धांत का साथ दिया। सरदार साहिब सारी उम्र जब्र-ज़ुल्म एवं धक्केशाही के विरुद्ध लड़ते रहे, पहले महंतों-पुजारियों की गुंडागर्दी, फिर अंग्रेज साम्राज्य की तानाशाही के विरुद्ध। वे धार्मिक, राजसी जीवन-मूल्यों की बहाली के लिए सदैव संघर्षशील रहे। कौमी जी की धर्म-पत्नी बीबी सतवंत कौर इनकी जेल-यात्रा के दौरान ही अकाल चलाना कर गयी। स. गोपाल सिंघ कलम के धनी थे। अपने विचारों को प्रकट करने के लिए कौमी जी ने 'अज़ाद अकाली' अख़बार शुरू किया। अंग्रेज सरकार ने कुछ समय के बाद ही इस पर पाबंदी लगा दी। इन्होंने एक ट्रेक्ट 'कम्यूनिज़म, रिलीज़न एण्ड सिविल लिबर्टी' कुंदन एजेंसी, लाहौर से १९४२ ई में (२४ पृष्ठ) प्रकाशित करवाया।

साइमन कमीशन के भारत में आने के समय स. गोपाल सिंघ कौमी शिरोमणि अकाली दल के अध्यक्ष थे। प्रत्येक कौमी, धार्मिक, सामाजिक तथा राजसी संघर्ष के समय स. गोपाल सिंघ कौमी ने अहम हिस्सा लिया। १९४७ ई में इन्होंने अकाली दल को तिलांजलि दे दी तथा कांग्रेस पार्टी के सदस्य बन गए। पंडित नेहरू ने इनको पुनर्वास कमेटी का मुखिया बनाया। नयी चुनी शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की पहली जनरल एकत्रता ७ फरवरी, १९५५ ई को श्री अमृतसर में हुई, जिसमें स. गोपाल सिंघ कौमी दिल्ली से सदस्य नामज़द किए गए। इसी दिन ये कार्यकारिणी के सदस्य भी चुने गए। ७

मार्च, १९६० ई तथा २९ नवंबर, १९६३ ई को हुए जनरल समागमों के समय स. गोपाल सिंघ कौमी शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सदस्य नामज़द हुए। कौमी जी कांग्रेस की नीति से सहमत न रह सके तथा १९६२ ई में दोबारा अकाली दल में शामिल हो गए। पंजाब विधान सभा के चुनाव में ये जलंधर छावनी से विधायक चुने गए।

१९६५ ई में कौमी जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी के कुछ भाग हिंदी में अनुवाद करके अपनी कौमी प्रेस, जलंधर से प्रकाशित करवाये। बोल-वाणी में बेबाक, कलम के धनी दोआबा के निडर योद्धा स. गोपाल सिंघ कौमी को देश-कौम की की गई सेवा के बदले १५ अगस्त, १९७२ ई को ताम्र-पत्र भेंट करके सम्मानित किया गया।

देश-भक्त स. गोपाल सिंघ कौमी के मन में देश-विभाजन के समय जो मानवीय जीवन-मूल्यों का हनन, निर्दोषों का कत्लेआम तथा गुंडागर्दी का नाच हुआ उसने बहुत बुरा असर डाला। दूसरा, सच बोलने की आदत इनको काफी महंगी पड़ी। कौमी साहिब निःस्वार्थ, निष्काम सेवा-भावना वाले, अकाल के पुजारी अकाली थे। संघर्षमयी जीवन होने के कारण इनको ज्यादातर समय घर से बाहर ही रहना पड़ता था। घर-परिवार की देखभाल इनका बड़ा सुपुत्र स. करतार सिंघ कौमी करता था। अचानक स. करतार सिंघ कौमी अकाल चलाना कर गए। इनकी मृत्यु का गहरा सदमा बुजुर्ग पिता को पहुंचा। परिणामतः शारीरिक तौर पर कमज़ोर, मानसिक रूप से परेशान स. गोपाल सिंघ कौमी ने हर तरह की धार्मिक, सामाजिक, राजसी गतिविधियों से सन्यास ले लिया। कुछ समय बीमार रहने के उपरांत १६ मई, १९७५ ई को स. गोपाल सिंघ कौमी जलंधर में परलोक सिधार गए। डॉ साधू सिंघ हमदर्द ने श्रद्धा-सत्कार के रूप में विशेष लेख लिखकर कौमी जी को श्रद्धांजलि भेंट की।

२८ मई, १९७५ ई को स. गोपाल सिंघ कौमी की अंतिम अरदास के समय ज्ञानी जैल सिंघ जी, मुख्यमंत्री पंजाब ने श्रद्धा-सत्कार भेंट करते हुए एलान किया कि रैणक बाज़ार, जलंधर में स. गोपाल सिंघ कौमी की प्रतिमा स्थापित की जाएगी तथा स्पोर्ट्स कॉलेज का नाम बदलकर इनके नाम पर रखा जाएगा। २४ मार्च, २००४ ई को स. गोपाल सिंघ कौमी की प्रतिमा स्थापित करके सरकार ने देश-भक्त की कुर्बानी की ऋण-पूर्ति की। स्पोर्ट्स कॉलेज के नाम वाला वादा अभी तक वफ़ा नहीं हुआ। १० जून, १९७५ ई को कार्यकारिणी (शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी) की एकत्रता के समय स. गोपाल सिंघ कौमी के अकाल चलाना कर जाने पर दुख एवं शोक का प्रकटावा प्रस्ताव नं. ३६० द्वारा करते हुए कौमी जी की तसवीर केंद्रीय सिक्ख अजायब घर (संग्रहालय) में स्थापित करने का फैसला किया गया। कौमी जी की तसवीर अजायब घर में सुशोभित है।

१४ दिसंबर, २००७ ई को शिरोमणि अकाली दल के ८८वें स्थापना दिवस समारोह के समय शिरोमणि अकाली दल के अध्यक्ष स. प्रकाश सिंघ बादल ने स. गोपाल सिंघ कौमी की सेवाओं का सत्कार करते हुए उनके परिवार को सम्मानित किया। स. जोगिंदर सिंघ कौमी, भूतपूर्व आई ए एस. ने अपने सम्मानित पिता की विरासत को संभालने के लिए ७११, मॉडल टाऊन, जलंधर में 'स. गोपाल सिंघ कौमी फाउंडेशन' स्थापित किया है।

ख़बरनामा

स. दीदार सिंघ (बैंस) द्वारा 13.8 एकड़ ज़मीन शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को भेंट

श्री अमृतसर : २१ फरवरी : अमेरिका के शहर यूबा सिटी के निवासी सिक्ख स. दीदार सिंघ (बैंस) ने अमेरिका के शहर यूबा सिटी में १३.८ एकड़ ज़मीन शिरोमणि गु. प्र. कमेटी को भेंट की। उन्होंने ज़मीन के कागज़ात श्री दरबार साहिब के सूचना केंद्र में जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी को भेंट किए।

इस अवसर पर जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि स. दीदार सिंघ (बैंस) गुरु-घर के अनन्य सेवक हैं तथा शिरोमणि गु. प्र. कमेटी इनकी इस महान सेवा की प्रशंसा करती है। उन्होंने कहा कि शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा इस ज़मीन पर सिक्खी के प्रचार-प्रसार के लिए सिक्ख मिशन तथा उच्चस्तरीय स्कूल खोला जाएगा। जत्थेदार अवतार सिंघ और सिंघ साहिब ज्ञानी मल्ल सिंघ, मुख्य ग्रंथी, श्री हरिमंदर साहिब ने स. दीदार सिंघ (बैंस) को श्री हरिमंदर साहिब का मॉडल तथा सिरोपाउ देकर सम्मानित किया।

इस अवसर पर स. रघूजीत सिंघ करनाल, वरिष्ठ उपाध्यक्ष शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, स. रजिंदर सिंघ महिता कार्यकारिणी सदस्य तथा स. रूप सिंघ सचिव शिरोमणि गु. प्र. कमेटी भी मौजूद थे।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा इंटरनेट एप्लीकेशन (लाईव कीर्तन) का आगाज़

श्री अमृतसर : २ मार्च : शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा संगत की सुख-सुविधा हेतु समय-समय पर विभिन्न योजनाओं को लागू किया जाता है। इसी शृंखला में एक कदम और आगे बढ़ाते हुए संस्था के इंटरनेट विभाग द्वारा इंटरनेट एप्लीकेशन (लाईव कीर्तन) बनाई गई है, जिससे संगत और भी अधिक परिपक्वता से गुरबाणी के साथ जुड़ सकेगी।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने आई फोन तथा आई पैड पर चलने वाली इस एप्लीकेशन का शुभ आरंभ करते हुए बताया कि इंटरनेट के माध्यम से संगत को गुरबाणी के साथ जोड़ने के उद्देश्य से शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने एक बहुत ही विलक्षण तथा अपने आप में सब सुविधाओं से युक्त इंटरनेट एप्लीकेशन का निर्माण किया है, जिसका फायदा आसानी से गुरु-घर के प्रेमी ले सकेंगे।

इस एप्लीकेशन को अस्तित्व में लाने वाले स. जसपाल सिंघ, इंचार्ज, इंटरनेट विभाग ने बताया कि यह एप्लीकेशन अंग्रेजी व पंजाबी दोनों भाषाओं में उपलब्ध है। जब यह एप्लीकेशन चालू होती है तो श्री हरिमंदर साहिब से रोज़ाना किया जाने वाला इलाही बाणी का कीर्तन खुद-ब-खुद चलना शुरू हो जाता है। इसके लिए किसी और कमांड की जरूरत नहीं पड़ती। श्री हरिमंदर साहिब से आने वाला रोज़ाना का मुखवाक (हुकमनामा) भी बहुत ही आसानी से पढ़ा जा सकता है, जो कि अंग्रेजी और पंजाबी

दोनों भाषाओं में उपलब्ध होगा। इसके साथ ही संगत हुकमनामा भी सुन सकती है। इसके लिए कोई अलग फाईल डाऊनलोड करने या किसी अन्य पेज़ पर जाने की जरूरत नहीं, बल्कि हुकमनामा पढ़ते-पढ़ते साथ ही आडियो फाईल खुद ही चलने लग जाती है।

श्री हरिमंदर साहिब से आने वाले रोज़ाना के मुखवाक की कथा, जो कि गुरुद्वारा श्री मंजी साहिब दीवान हाल, श्री अमृतसर में होती है, भी इस एप्लीकेशन के माध्यम से संगत सुन सकती है। संक्रांति महीने की कथा भी इस पर आसानी से पढ़ी व सुनी जा सकती है। इस एप्लीकेशन में एक गुरबाणी सेक्शन बनाया गया है, जिसमें नित्तनेम तथा अन्य बाणी आडियो एवं आसानी से पढ़े जा सकने वाले रूप में उपलब्ध करवायी गयी है। इसकी मदद से संगत अपनी मर्जी से बाणी पढ़ भी सकती है और सुन भी सकती है। जो संगत गुरमुखी पढ़ने में मुहारत नहीं रखती, उसकी सुविधा के लिए इसमें सारी बाणियां रोमनाइज़्ड रूप में भी उपलब्ध करवायी गयी हैं। बाणी वाला फोंट ज़रूरत के अनुसार बड़ा या छोटा किया जा सकता है।

इस एप्लीकेशन के श्री गुरु ग्रंथ साहिब सेक्शन में बहुत सारी सुविधाएं संगत की मांग को मुख्य रखकर उपलब्ध करवायी गयी हैं। इससे संगत को बहुत फायदा मिलेगा। इसमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब को मोबाइल एप्लीकेशन के रूप में तैयार किया गया है, जिसमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी को मोबाइल से भी आसानी से पढ़ा जा सकेगा। इसमें मुख्य सुविधा यह है कि संगत जब भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब का कोई भी पन्ना पढ़ना शुरू करेगी तो उस पन्ने से सम्बंधित बाणी आडियो रूप में भी साथ-साथ चलती आरंभ हो जाएगी। इससे गुरबाणी का शुद्ध उच्चारण करने में बहुत सहायता मिलेगी। कीर्तन-सेवा के नाम से एक सुविधा प्रदान की गयी है, जिसमें श्री हरिमंदर साहिब में रोज़ाना कीर्तन करने वाले रागी-जत्थों की मासिक सूची उपलब्ध होगी। गुरु साहिबान से संम्बधित गुरुपर्व तथा अन्य ऐतिहासिक दिवस की जानकारी देश-विदेश की संगत तक पहुंचाने के लिए नानकशाही कैलंडर उपलब्ध करवाया गया है। सिक्ख इतिहास तथा गुरु साहिबान से संबंधित तसवीरें भी फोटो गैलरी के रूप में मिल सकेंगी।

श्री हरिमंदर साहिब में होने वाले इलाही बाणी-कीर्तन को संगत की सुविधा के लिए रिकार्डिड रूप में भी उपलब्ध करवाने के लिय 'रिकार्डिंग कीर्तन' नाम से सेक्शन बनाया गया है। इसमें सम्बंधित तारीखों के रूप में गुरबाणी-कीर्तन की रिकार्ड की गई फाइलें उपलब्ध करवायी गयी हैं। इसके अलावा गुरमुखी व गुरबाणी के अर्थों को पढ़ने व समझने के लिए विशेष रूप में शब्द कोश भी उपलब्ध करवाया गया है। इसके साथ यदि पंजाबी पढ़ने-सुनने तथा गुरबाणी-अर्थों को समझने में कोई मुश्किल आती है तो उसे इसके प्रयोग से दूर किया जा सकता है। यह सॉफ्टवेयर आई फोन/ आई पैड पर उपलब्ध **app store** पर 'लाईव कीर्तन' सर्च करने पर डाऊनलोड हेतु उपलब्ध करवाया गया है।

धार्मिक परीक्षा वर्ष-२०१२ का परिणाम घोषित

श्री अमृतसर : २८ फरवरी : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा हर वर्ष ली जाने वाली धार्मिक परीक्षा के अंतर्गत नवंबर २०१२ में ली गई परीक्षा का परिणाम स. सतबीर सिंघ सचिव, स. दिलजीत सिंघ अपर सचिव द्वारा घोषित किया गया।

चार दर्जों में विभाजित धार्मिक परीक्षा का दर्जावार परिणाम घोषित करते समय स. सतबीर सिंघ ने बताया कि प्रथम दर्जे में कुल ११७५६ विद्यार्थियों ने भाग लिया था। इस दर्जे में से बाबा बुड्ढा जी पब्लिक सीनियर सेकंडरी स्कूल, बीड़ साहिब, ठठ्टा (तरनतारन) के ८वीं कक्षा के छात्र जजबीर सिंघ अनुक्रमांक ३७५१ ने पहला स्थान प्राप्त किया। खालसा मॉडर्न सी. से. स्कूल, बहादरपुर रजोआ (गुरदासपुर) की ८वीं कक्षा की छात्रा गगनदीप कौर अनुक्रमांक १५८८ ने दूसरा स्थान; गोबिंद सरवर बुलंदपुरी सी. से. स्कूल, बुलंद (जलंधर) की ८वीं कक्षा की छात्रा अनमोल कौर अनुक्रमांक ३८३५ ने तीसरा स्थान प्राप्त किया।

द्वितीय दर्जे के परिणाम सम्बंधी उन्होंने बताया कि इस दर्जे में कुल १०६९९ विद्यार्थी सम्मिलित हुए थे। इनमें से एक ही स्कूल गुरु नानक पब्लिक सी. से. स्कूल, सोढल रोड, जलंधर की १०वीं कक्षा की छात्रा किरनदीप कौर अनुक्रमांक ५५८; १२वीं कक्षा की छात्रा हरमिंदर कौर अनुक्रमांक ५८३; १०वीं कक्षा की छात्रा इंदरजीत कौर अनुक्रमांक ५६० ने क्रमश: पहला, दूसरा व तीसरा स्थान प्राप्त किया।

तृतीय दर्जे के सम्बंध में उन्होंने बताया कि इस दर्जे के लिए १९०२ विद्यार्थियों ने परीक्षा दी थी। इस दर्जे में पहला व दूसरा स्थान बाबा श्रीचंद खालसा कॉलेज फॉर वुमेन, गाहलड़ी (गुरदासपुर) के छात्र प्रभजोत सिंघ अनुक्रमांक १४३५ व छात्रा कवलदीप कौर अनुक्रमांक १४२० ने प्राप्त किया। तीसरा स्थान गुरु नानक कॉलेज, मोगा की छात्रा अंम्रित कौर अनुक्रांमक ८५९ ने हासिल किया।

चतुर्थ दर्जे में २६५ विद्यार्थी थे। इनके परिणाम सम्बंधी स. सतबीर सिंघ ने बताया कि इस दर्जे में से पहले स्थान पर गुरमति कॉलेज, पटियाला के छात्र दविंदर सिंघ अनुक्रमांक १९६ तथा गुरु नानक कॉलेज, मोगा की छात्रा कमलदीप कौर अनुक्रमांक १२७ ने कब्ज़ा किया। दूसरा स्थान गुरमति कॉलेज, पटियाला की छात्रा मनिंदर कौर अनुक्रमांक १९७ के हिस्से रहा। तीसरे स्थान के लिए दो विद्यार्थियों ने बाज़ी मारी, जिनमें गुरु नानक कॉलेज, मोगा की छात्रा गुरविंदर कौर अनुक्रमांक १३५ तथा गुरु गोबिंद सिंघ खालसा कॉलेज फॉर फुमेन, झाड़ साहिब (लुधियाना) की छात्रा सुखदीप कौर अनुक्रमांक २३९ का नाम उल्लेखनीय है।

स. सतबीर सिंघ ने बताया कि चारों दर्जों में से मेरिट में आने वाले विद्यार्थियों को दर्जावार क्रमश: ११००, २१००, ३१०० तथा ४१०० रुपये वर्षिक छात्रवृत्ति दी जाती है। इसके अलावा हर दर्जे में से पहली तीन पोजीशनें प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को क्रमश: २१००, १५०० एवं ११०० रुपए विशेष इनाम के रूप में दिए जाते हैं। उन्होंने बताया कि इस वर्ष लगभग २१ लाख रुपए के वजीफे दिए जाएंगे। स. दिलजीत सिंघ अपर सचिव ने सभी दर्जों में से अव्वल आने वाले विद्यार्थियों को मुबारकबाद दी तथा स्कूलों/कॉलेजों के प्रधानाध्यापकों से अपील की कि वे वर्ष २०१३ की परीक्षा में अधिक से अधिक विद्यार्थियों को सम्मिलित करवाएं। इस अवसर पर स. भुपिंदरपाल सिंघ उप सचिव, स. सतनाम सिंघ इंचार्ज तथा स. दलजीत सिंघ सुपरवाईज़र भी उपस्थित थे।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०४-२०१३